पूर्वी क्षेत्र में कृषि विकास हेतु तकनीकी विकल्प

उज्ज्वल कुमार, अब्दुल हैरिस, अमिताभ डे एवं भगवती प्रसाद भट्ट

भाकृअनुप
ICAR

पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का अनुसंधान परिसर

आई.सी.ए.आर. परिसर, पो. बिहार वेटरनेरी कॉलेज, पटना-800 014

सही उद्धरण

तकनीकि बुलेटिन नं. R-35/PAT-23

पूर्वी क्षेत्र में कृषि विकास हेतु तकनीकी विकल्प

संकलन एवं संपादन

उज्ज्वल कुमार, अब्दुल हैरिस, अमिताभ डे एवं भगवती प्रसाद भट्ट

पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का अनुसंधान परिसर, पटना

© पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का अनुसंधान परिसर, पटना

वर्ष 2014

प्रकाशकः निदेशक, पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का अनुसंधान परिसर, पटना-800 014 (बिहार)।

मुद्रकः दि कम्पोजरस् प्रैस, न्यू पटेल नगर, नई दिल्ली-110008, दूरभाषः 011-25707869, 9810771160

सत्यमेव जयते

डॉ. एस. अय्यप्पन
सचिव एवं महानिदेशक

Dr. S. AYYAPPAN
SECRETARY & DIRECTOR GENERAL

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110 001

GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Ministry of Agriculture, Krishi Bhawan, New Delhi-110 001
Tel.:23382629; 23386711 Fax: 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

प्राक्कथन

भा.कृ.अनु.प. का पूर्वी क्षेत्र के लिए अनुसंधान परिसर, पटना देश के पूर्वी राज्यों की अनुसंधान एवं विकास योजनाओं को क्रियान्वित करने हेतु एक बहु-विषयी व बहु-उत्पाद वाले अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्यरत है। इस संस्थान की स्थापना 2001 में हुई थी और अपनी स्थापना के बाद से यह संस्थान, कृषि-बागवानी फसलों, पशुधन, मास्त्यिकी, कृषि-वानिकी तथा अन्य जल स्रोतों के क्षेत्र में सक्रिय तौर पर अनुसंधानरत है। यह दस्तावेज पूर्वी क्षेत्र में कृषि विकास की बेहतरी के लिए प्रमाणिक/परिष्कृत प्रौद्योगिकियों तथा विकसित किस्मों और मॉडलों के बारे में जानकारी प्रदान करता है जो कि पूर्वी क्षेत्र में प्रौद्योगिकी विकल्प द्वारा कृषि रूपांतरण में सहायक होगा।

मैं, कृषि विकास के क्षेत्र में संस्थान द्वारा की गई प्रगति को देखकर प्रसन्न हूँ जो कि इस दस्तावेज से स्पष्ट है।

मैं संस्थान के निदेशक और उनकी टीम के सदस्यों को इस महत्वपूर्ण प्रकाशन के लिए धन्यवाद देता हूँ जो कि पूर्वी राज्यों के कृषि विकास से जुड़े सभी लोगों के लिए लाभदायक होगा।

¼, l- v,;liu½

दिनांकः 9 जून, 2014
नई दिल्ली

प्रस्तावना

भारत का पूर्वी क्षेत्र 83 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या सहित घनी आबादी वाला क्षेत्र है। तथा यहाँ की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। हांलाकि, अधिक जनसंख्या, भूमि अवक्रमण, प्रतिव्यक्ति न्यूनतम आय, छोटी तथा बिखरी जोत, गुणवत्ता वाले बीज और रोपण सामग्री की कमी तथा खराब प्रसार तंत्र के परिणामस्वरूप पूर्वी राज्यों में कृषि जटिल, विविधता से भरी तथा जोखिमपूर्ण है। इन सबके बावजूद पूर्वी क्षेत्र में न केवल सिंचित इलाकों वरन पठारी तथा पहाड़ी क्षेत्रों में भी कृषि उत्पादकता को बढ़ाने की अपार संभावनाएं मौजूद हैं ।

पूर्वी राज्यों में कृषि उत्पादन की पूर्ण क्षमता के उपयोग के लिए वर्ष 2001 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी परिसर की स्थापना की गई ताकि कृषि, बागवानी, पशुधन, मात्स्यिकी, कृषिवानिकी तथा नमी वाले इलाकों में प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग द्वारा महत्वपूर्ण और अनुकूलनीय अनुसंधान किया जा सके। संस्थान का अंतिम लक्ष्य खाद्य, पोषण और आजीविका सुरक्षा के लिए प्रौद्योगिकी हस्तक्षेपों द्वारा ''निम्न उत्पादकता और उच्च संभावनाएं'' वाले क्षेत्र को उच्च उत्पादकता वाले क्षेत्रों में परिवर्तित करना है।

संस्थान ने अपनी स्थापना के बाद से ही कृषि विकास के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकियों को विकसित करने के जोरदार प्रयास किए हैं। घरेलू और निजी स्तर पर खाद्य एवं पोषण सुरक्षा प्राप्त करने के लिए समेकित खेती प्रणाली (आईएफएस) को सबसे महत्वपूर्ण भूमि उपयोग प्रणाली माना जाता है। अतः संस्थान ने समान कृषि-जलवायु वाले इलाकों में इसके व्यापक प्रसार के लिए समेकित कृषि प्रणालियों को विकसित किया है। पहाड़ी और पठारी क्षेत्रों में बागवानी और कृषि-वानिकी हस्तक्षेपों को संभावनायुक्त पाया गया है जो कि राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 48 प्रतिशत है। विशेषकर, भूमिहीन गरीबों की आजीविका में सुधार के लिए पशुपालन प्रक्रियाओं को सबसे उपयुक्त उद्यम पाया गया है।

इस संस्थान की स्थापना को अब 13 वर्ष हो चुके हैं अतः इस क्षेत्र के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकियों के परिष्करण के अलावा परिसर द्वारा किस्मों/प्रौद्योगिकी तथा मॉडल/उत्पादों के विकास के रूप में की गई प्रगति को ''पूर्वी क्षेत्र में कृषि विकास हेतु तकनीकी विकल्प'' नामक तकनीकी पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किया गया है। हमें आशा है कि यह दस्तावेज शोधकर्ताओं तथा इस क्षेत्र में कार्यरत अन्य सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों के लोगों के लिए पूर्वी राज्यों में प्राकृतिक संसाधनों के आधार को बनाए रखते हुए स्थायी खाद्य उत्पादन की दिशा में एक नीतिगत दृष्टिकोण विकसित करने में उपयोगी सिद्ध होगा।

लेखक

विषय सूची

1.0 विभिन्न किस्म/तकनीकों का विकास 1

1.1 बैंगन की प्रतिरोधी किस्में 2

1.2 बैंगन की अधिक उपज देने वाली संकर प्रजाति 3

1.3 उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की प्रतिरोधी टमाटर की किस्में 4

1.4 अधिक उपज देने वाली टमाटर की संकर किस्में 5

1.5 संरक्षित खेती के लिए प्रसंस्करण किस्म की प्रजाति के टमाटर की पैदावार 7

1.6 'स्वर्ण अनमोल' : संरक्षित खेती के लिए जीवाणु विल्ट प्रतिरोधी संकर-टमाटर का प्रभेद 8

1.7 'स्वर्ण प्रफुल्य': मिर्च के लिए जीवाणु विल्ट प्रतिरोधी प्रभेद 9

1.8 'स्वर्ण अतुल्य' : सामान्य खेती द्वारा शिमला मिर्च की अधिक उपज देने वाली किस्म 10

1.9 'स्वर्ण स्नेहा': लौकी की उच्च उपज देने वाली किस्म 11

1.10 'स्वर्ण यामिनी' : करैले की उच्च उपज देने वाली किस्म 12

1.11 'स्वर्ण स्वानी' : सतपुतीया की उच्च उपज देने वाली किस्म 13

1.12 झिंगली की अधिक उपज देने वाली किस्म 14

1.13 परवल की उन्नत प्रजातियाँ 15

1.14 मध्य-मौसमी मटर की उन्नत प्रजातियाँ 16

1.15 स्नो मटर की उन्नत प्रजाति 18

1.16 सब्ज़ी हेतु लोबिया की उन्नत प्रजाति 19

1.17 सेम की उन्नत प्रजाति 21

1.18 सब्जी-सोयाबीन की उन्नत प्रजाति 22

1.19 बाकला की उन्नत प्रजनन लाईनें 23

1.20 सब्जी और फल हेतु कटहल की उन्नत प्रजातियाँ 24

1.21 'स्वर्ण वैदेही' : देश में मखाना की विकसित प्रथम प्रभेद 25

1.22 सुखाड़ सहिष्णु धान का उत्पादन 26

1.23 मखाना की फसल प्रणाली में खेती 28

1.24 शीतकालीन मक्का रोपाई 30

1.25 डेयरी पशुओं के लिए स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों पर आधारित सस्ता चारा प्रबंधन 32

1.26 सूअर उत्पादन के लिए धान का चोकर/भूसी आधारित आहार कि व्यवस्था 34

1.27 मुर्गी के विकास में दही की भूमिका 35
1.28 मुर्गी पालन और बकरी के भोजन में मखाना की भूसी की भूमिका 36
1.29 पशुओं के आहार के लिए गैर-पारंपरिक अनाज का इस्तेमाल 37
1.30 उत्पादकता बढ़ाने के लिए मछली और सिंघाड़ेका मखाने के साथ एकीकरण 39
1.31 झींगा पालन के लिए मौसमी बंधन नहीं 41
1.32 कम ऊर्जा वाली जल संप्रयोग प्रणाली (एल.ई.डब्ल्यू.ए.) का विकास 42
1.33 कम उर्जा वाले छिड़काव प्रणाली की अभिकल्पना और विकास 44
1.34 सिंचाई हेतु सौर उर्जा का उपयोग 45
1.35 झाड़ियों की अंतर-फसल के जरिए अम्लीय मिट्टी में सुधार 46
1.36 मृदा और रोग प्रबंधन प्रौद्योगिकी 48

2.0 विकसित किए गए मॉडल/उत्पाद/प्रक्रिया 49

2.1 छोटी जोत/सीमांत किसानों के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल (आधा एकड़ पर आधारित प्रतिरूप) 50
2.2 सिंचित मध्य/ऊँचाई पर स्थित भूमि के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल (एक एकड़ पर आधारित प्रतिरूप) 51
2.3 निचली भूमि और सिंचित पारिस्थितिक तंत्र के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल (दो एकड़ पर आधारित प्रतिरूप) 53
2.4 पूर्वी पहाड़ी और पठारों के वर्षा आधारित ऊपरी भूभाग पारिस्थितिकी तंत्र के विकास के लिए बहु-स्तरीय बागवानी भूमि के उपयोग संबंधी मॉडल का विकास 55
2.5 मशरूम का पहाड़ी और पठारी क्षेत्रों में साल भर उत्पादन 57
2.6 मशरूम सूप मिश्रण का विकास 59
2.7 जलीय उत्पादकता बढ़ाने के लिए समेकित कृषि और मछली पालन के साथ पानी की बहुउद्देशीय इस्तेमाल प्रणाली 60
2.8 जल भराव वाले क्षेत्रों में पानी के बहुउद्देशीय इस्तेमाल के साथ ट्रेंच सह रेज्ड बेड प्रणाली 62
2.9 नीची भूमि की चावल-गेहूँ प्रणाली में धान-सह-मछली पालन 64
2.10 जल के संयुक्त इस्तेमाल के विकल्प हेतु निर्णायक युक्ति (Decision Support Tool) 65
2.11 नहर संचालन संबंधी निर्णायक युक्ति (Decision Support Tool) 67
2.12 जलवायु परिवर्तन का धान और गेहूँ पर असर संबंधी मॉडल और बिहार के लिए संभावित अनुकूल कदम 68

2.13 मक्का पर जलवायु परिवर्तन का असर और बिहार के लिए संभावित अनुकूल कदम 69

3.0 तकनीक का मानकीकरण 71

3.1 धान की सीधी बुआई द्वारा संसाधन की बचत 72

3.2 संरक्षित कृषि पर आधरित फसल प्रणाली 76

3.3 आंशिक कृषि संरक्षण द्वारा संवर्धित धान गेहूँ फसल प्रणाली में गहरी ग्रीष्मकालीन जुताई 78

3.4 कदवा के बिना धान की यांत्रिकी रोपाई का मानकीकरण 80

3.5 बारिश के पानी के दक्षता पूर्वक उपयोग के लिए धान रोपाई के समय का अनुकूलन 82

3.6 बोरो धान की पौधशाला का प्रबंधन 84

3.7 पूर्वी प्रदेशों में एरोबिक धान का उत्पादन 86

3.8 अतिरिक्त नमी वाले क्षेत्रों में गेहूँ की सतही बुवाई 88

3.9 संसाधन संरक्षण तकनीक से शून्य जुताई वाला गेहूँ 89

3.10 सामयिक बुवाई अवस्थाओं में क्यारियों (बेड) में गेहूँ की खेती को प्रोत्साहन 91

3.11 अधिक उपज की संभावनाओं वाली किस्मों का कृषक भागीदारी द्वारा मूल्यांकन 93

3.12 ढैंचा (सेस्बानिया) के माधयम से भूरे रंग की खाद 95

3.13 मसूर, चना और गर्मी के समय मूंग की खेती में शून्य जुताई की स्वीकार्यता को प्रोत्साहन 97

3.14 सिंचित पर्यावरण प्रणालियों में विविध धान आधारित फसल प्रणाली की स्थिरता, उत्पादकता और लाभप्रदता 98

3.15 बहु-जल उपयोग प्रणाली के तहत फसलों के अनुक्रम की जल उत्पादकता 100

3.16 पहाड़ी भू भागों पर फलों के बगीचे लगाने के लिए कम लागत वाली वर्षा जल संचयन संरचना (डोबा) का विकास 102

3.17 धान-गेहूँ पारिस्थितिक तंत्र में कृंतक (चूहा) प्रबंधन 104

3.18 अनुत्पादक आम के बगीचों का कायाकल्प 108

3.19 उच्च घनत्व वाले आम के बगीचों का विकास 110

3.20 अति उच्च घनत्व वाले अमरुद के बगीचों का विकास 112

3.21 अल्फीसोल भूमि में टमाटर की फसल में उकठा (बैक्टीरियल विल्ट) का एकीकृत प्रबंधन 114

3.22 टपक सिंचाई प्रणाली के तहत सब्जी की फसलों की उत्पादन प्रक्रिया 116

3.23 अधिक दूध उत्पादन के लिए खनिजमिश्रण प्रदाय के ठोस विकल्प 118

3.24 अधिक दूध उत्पादन और उत्तम स्वास्थ्य के लिए पशुओं में कृमियों का नियमित उपचार 119
3.25 भूमिहीन व्यक्तियों के जीवन स्तर में बेहतरी के लिए छोटे स्तर पर मुर्गी पालन 120
3.26 सिंचित क्षेत्रों में डेयरी पशुओं के लिए साल भर चारे का उत्पादन 122
3.27 सूअर उत्पादन के लिए शकरकंद आधारित आहार 123
3.28 खरगोश के लिए फली चारा आधारित आहार 124
3.29 आर्द्र भूमि क्षेत्रों में 'केज' प्रक्रिया से मछली पालन की खेती 125
3.30 लघु कृषकों के जिवकोत्थान एवं मत्स्य उत्पादकता सुधार हेतु मत्स्य बीज उत्पादन 127

1.0 विभिन्न किस्म/तकनीकों का विकास

1.1 बैंगन की प्रतिरोधी किस्में

संबद्ध वैज्ञानिक

वी. एस. आर. कृष्णा प्रसाद, आर. एस. पान, मथुरा रॉय, ए. के. सिंह और जे. पी. शर्मा।

समस्या

सार्वजनिक क्षेत्र के उच्च पैदावार वाले बैंगन की प्रजातियों में उकठा (बैक्टीरियल विल्ट) की समस्या से लड़ने वाले प्रतिरोधी अवयवों की कमी।

विवरण

स्वर्ण प्रतिभा

- स्वर्ण प्रतिभा का विकास 'प्योर लाइन सलेक्शन' प्रक्रिया के माध्यम से झारखंड के सिमडेगा से एकत्रित जर्मप्लास्म लाइन की मदद से किया गया। इस प्रजाति के बैंगन लंबे (15–20 सेंटीमीटर) एवं चमकीले बैंगनी रंग के होते हैं। एक फल का औसत वजन 150–200 ग्राम होता है। यह काफी स्वादिष्ट होता है।
- स्वर्ण श्यामिली को भी 'प्योर लाइन सलेक्शन' के माध्यम से विकसित किया गया। इसके जर्मप्लास्म लाइन को झारखण्ड के रांची जिले से प्राप्त किया गया। इस प्रजाति के बैंगन (200–250 ग्राम वजन) गोलाकार, हरे एवं बैंगनी रंग के धारीदार फल होते हैं।
- कुछ ही सालों के अंतराल में स्वर्ण प्रतिभा और स्वर्ण श्यामली ने किसानों के खेतों में और बहुस्थानीय प्रयोगों के दौरान ज्यादा पैदावार, फल की गुणवत्ता और जीवाणुओं से लड़ने के कारण अपनी लोकप्रियता बनायी है। स्वर्ण प्रतिभा (60–65 टन प्रति हेक्टेयर) और स्वर्ण श्यामली (60–65 टन प्रति हेक्टेयर) का पैदावार चेक की तुलना में 50–60 फीसदी अधिक दर्ज किया गया है।

स्वर्ण श्यामली

क्षेत्र / स्थिति

ए.आई.सी.आर.पी. (वीसी) की 20वीं समूह बैठक में समग्र प्रदर्शन के आधार पर, स्वर्ण प्रतिभा को अंचल 1 (जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड) और अंचल 2 (मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र) में जारी करने और उपजाने के लिए सिफारिश की गई। पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का अनुसंधान परिसर, पटना की प्रजाति जारी करने संबंधित समिति ने स्वर्ण श्यामली को झारखंड, बिहार और आसपास के क्षेत्रों में व्यवसायिक खेती के हिसाब से जारी किया।

लाभ–लागत अनुपात

लाभ और लागत का अनुपात स्वर्ण श्यामली और स्वर्ण प्रतिभा के लिए क्रमशः 2.99 : 1 और 3.79 : 1 आंका गया है।

1.2 बैंगन की अधिक उपज देने वाली संकर प्रजाति

संबद्ध वैज्ञानिक

वी. एस. आर. कृष्णा प्रसाद, आर. एस. पान, मथुरा रॉय, ए. के. सिंह, एस. कुमार और जे. पी. शर्मा।

समस्या

सार्वजनिक क्षेत्र में बैंगन की उकठा (बैक्टीरियल विल्ट) प्रतिरोधी क्षमता वाले F_1 संकर की कमी।

विवरण

- स्वर्ण शक्ति को हिट्रोसिस प्रजनन के माध्यम से विकसित किया गया है। यह प्रजाति मध्यम लंबे आकार (15–17 सेंमी) की है, जिनका रंग चमकीला हल्का बैंगनी होता है।
- स्वर्ण अजय भी इसी प्रकार से विकसित किया गया। यह प्रजाति आकर्षक अंडाकार है, जो कि खूबसूरत हल्के बैंगनी रंग के होते हैं।
- स्वर्ण शक्ति और स्वर्ण अजय ने किसानों के खेतों में और बहुस्थानीय प्रयोगों के दौरान ज्यादा पैदावार, फल की गुणवत्ता और जीवाणुओं और फोमोप्सिस तुषार (जिसमें बैंगन का फल का छिलका भूरे से गहरा भूरा हो जाता है), से लड़ने की क्षमता के मुद्दे पर अपनी संप्रभुता स्थापित की। स्वर्ण शक्ति (70–75 टन प्रति हेक्टेयर) और स्वर्ण अजय (70–75 टन प्रति हेक्टेयर) ने चेक की तुलना में 40–50 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज की।

स्वर्ण शक्ति

स्वर्ण अजय

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण शक्ति को संस्थान की प्रजाति जारी समिति (आईवीआरसी) के माध्यम से झारखंड और बिहार में खेती करने के लिए जारी किया गया। स्वर्ण अजय को एआईसीआरपी (वीसी) की 23वीं समूह बैठक के दौरान झारखंड, उत्तर प्रदेश और पंजाब में खेती के लिए जारी किया गया।

लाभ-लागत अनुपात

बैंगन की इन प्रजातियों में लाभ–लागत का अनुपात 3.05 : 1 का आंका गया।

1.3 उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की प्रतिरोधी टमाटर की किस्में

संबद्ध वैज्ञानिक

वी. एस. आर कृष्णा प्रसाद, मथुरा रॉय, आर. एस. पान, ए. के. सिंह, और जे. पी. शर्मा।

समस्या

उकठा रोग की समस्या से मुकाबला करने वाली खुली परागण उच्च पैदावार टमाटर प्रजाति का बिहार और झारखंड में अभाव।

विवरण

- स्वर्ण लालिमा को एनबीपीजीआर जर्म प्लास्म लाइन ईसी–339074 से प्योर लाइन चयन के माध्यम से विकसित किया गया। यह प्रजाति गोल (120–125 ग्राम) गहरे लाल रंग के फल, एवं 3–4 के गुच्छे में लगते हैं।
- स्वर्ण नवीन एनबीपीजीआर जर्म प्लास्म लाइन ईसी–386019 से प्योर लाइन चयन के माध्यम से विकसित किया गया। यह निर्धारित प्रजाति अंडाकार (60–70 ग्राम) गहरे लाल रंग के फल, एवं 8–10 के गुच्छे में लगते हैं।
- स्वर्ण लालिमा (60–70 टन प्रति हैक्टेयर) ने विविध स्थानों पर किए गए परीक्षण के दौरान अपनी श्रेष्ठता साबित की है (परीक्षण के बाद 60–70 फीसदी की बढ़ोतरी)। इसमें राल्सोटोनिया सोलनासीरम के रेस 1 के बायोवार 3 और 5 की प्रतिरोधी क्षमता है।
- स्वर्ण नवीन (60–65 टन प्रति हेक्टेयर) ने भी बहु स्थानीय परीक्षण के दौरान अपनी उत्कृष्टता साबित की। स्वर्ण नवीन ने परीक्षण की गई प्रजाति से औसतन 70–80 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज की। इसमें भी राल्सोटोनिया सोलनासीरम के रेस 1 के बायोवार 3 और 5 की प्रतिरोधी क्षमता है।
- दोनों ही प्रजातियां झारखंड और बिहार के लिए संस्थान की प्रजाति जारी समिति द्वारा जारी की गई हैं।

स्वर्ण लालिमा

स्वर्ण नवीन

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण लालिमा और स्वर्ण नवीन पूरे पूर्वी प्रदेशों में उपजाने के लिए उपयुक्त हैं।

लाभ–लागत अनुपात

लाभ– स्वर्ण लालिमा की खेती का लाभ और लागत अनुपात 2.95 : 1 पाया गया है। इसी तरह स्वर्ण नवीन का अनुपात 2.85 : 1 पाया गया।

1.4 अधिक उपज देने वाली टमाटर की संकर किस्में

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, मथुरा रॉय, वी. एस. आर कृष्णा प्रसाद, जे. पी. शर्मा और एस. कुमार।

समस्या

सार्वजनिक क्षेत्र में बैंगन की उकठा (विल्ट) प्रतिरोधी क्षमता वाले F_1 संकर की अनुपलब्धता।

विवरण

- स्वर्ण समृद्धि प्रजाति हिट्रोसिस प्रजनन के माध्यम से विकसित की गई है। इस प्रजाति के फल गोल, 70–80 ग्राम वजन के लाल और ठोस होते हैं। ये 8–10 के गुच्छे में लगते हैं। स्वर्ण समृद्धि (100–105 टन प्रति हेक्टेयर) में उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की बीमारी और तुषार या पाला के प्रतिरोधी तत्व मौजूद हैं। कुल घुलनशील ठोस (टीएसएस) 5.60 बी पाया गया है इस प्रकार यह प्रसंस्करण उद्योग के लिए भी बेहतर है। अनिश्चित अवधि तक पैदा होने के गुण के कारण फलों की उपलब्धता लंबे समय तक रहती है।

स्वर्ण समृद्धि

- स्वर्ण संपदा भी हिट्रोसिस प्रजनन के माध्यम से विकसित की गई है। इस प्रजाति में गोल, 120–130 ग्राम वजन के लाल, ठोस फल 4–5 के गुच्छे में लगते हैं। स्वर्ण संपदा (100–105 टन प्रति हेक्टेयर) में उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की बीमारी और तुषार या पाला के प्रतिरोधी तत्व मौजूद हैं। पौधे निश्चित अवधि में ही विकसित होते हैं। फलों में काफी गूदा होता है और सामान्य कमरे के तापमान पर भी लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

स्वर्ण संपदा

- स्वर्ण वैभव प्रजाति भी हिट्रोसिस प्रजनन के माध्यम से विकसित की गई है। इस प्रजाति के गोल, 140–150 ग्राम वजन के गहरे लाल रंग के ठोस फल होते हैं, जो 3–4 के गुच्छे में पैदा होते हैं। इनकी पैदावार प्रति हेक्टेयर 90 से 100 टन आंकी गई है। ये दूरी वाले बाजार में आपूर्ति और प्रसंस्करण के लिए बेहतर हैं।

स्वर्ण वैभव

- स्वर्ण विजया भी गोलाकार, ठोस और लाल होते हैं, जिनका वजन 80–90 ग्राम है। कुल घुलनशील ठोस

4.5 से 5.0 बी, अम्लता 0.35–0.40 प्रतिशत है और इनमें काफी गूदा होता है। औसतन पैदावार 90–100 टन प्रति हेक्टेयर है। इनमें उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की बीमारी और तुषार या पाला के प्रतिरोधी तत्व मौजूद हैं।

स्वर्ण विजया

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण समृद्धि संस्थान की प्रजाति जारी समिति (आईवीआरसी) के माध्यम से झारखंड और बिहार में पैदावार के लिए जारी किया गया है। स्वर्ण संपदा की पहचान झारखंड, बिहार, उत्तर प्रदेश और पंजाब में पैदावार के लिए आयोजित एआईसीआरपी (वीसी) की 20वीं और 23वीं समूह बैठक के दौरान की गई थी। स्वर्ण विजया को सीवीआरसी के माध्यम से उत्तराखंड, जम्मू और कश्मीर और हिमाचल प्रदेश में पैदावार के लिए जारी किया गया।

लाभ–लागत अनुपात

स्वर्ण समृद्धि और स्वर्ण संपदा की पैदावार में लाभ–लागत का अनुपात 3.16 : 1 है जबकि स्वर्ण वैभव और स्वर्ण विजया में यह 2.71 : 1 का है।

1.5 संरक्षित खेती के लिए प्रसंस्करण किस्म की प्रजाति के टमाटर की पैदावार

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, पी भावना और जे. पी. शर्मा।

समस्या

संरक्षित खेती के लिए उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की समस्या से मुकाबला करने वाली प्रतिरोधी प्रसंस्करण किस्म की प्रजाति के टमाटर की अनुपलब्धता।

विवरण

- जीवाणुओ के कारण उकठा रोग (बैक्टीरियल विल्ट) की समस्या की प्रतिरोधी लाइन (बीसी–596742) का विकास किया गया। इसका परिचय एवीआरडीसी (विश्व सब्जी केंद्र) ताईवान, ने दिया और एन.बी.पी.जी.आर. के माध्यम से उपलब्ध हुआ।
- इसकी बढवार प्रकृति अनिर्धारित (Indeterminate) है और ज्यादा उपज (140 टन प्रति हेक्टेयर) देता है। इसका पौधा 5.5 मीटर और फल का वजन 100–110 ग्राम होता है। फल आयताकार होता है। फल की लंबाई 8–9 सेंटी मीटर होती है। टी.एस.एस. 5.5 बी होता है। रोपाई अगस्त के मध्य में करने पर पहली फसल 70–80 दिन के बाद ली जा सकती है। फसल उपलब्धता का समय 180–200 दिन तक रहता है।

क्षेत्र / स्थान

यह प्रजाति सुरक्षित कृषि के लिए, खासकर जहाँ जीवाणुओं से पौधों के सूखने की समस्या ज्यादा है, वहाँ के लिए पूरी तरह से उचित है।

लाभ–लागत अनुपात

इसका लाभ–लागत अनुपात 1.40 : 1 आंका गया है।

1.6 'स्वर्ण अनमोल' : संरक्षित खेती के लिए जीवाणु विल्ट प्रतिरोधी संकर-टमाटर का प्रभेद

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, जे. पी. शर्मा, पी. भावना एवं एस. कुमार।

समस्या/विवरण

संरक्षित खेती के लिए बैक्टीरियल विल्ट प्रतिरोधी संकर टमाटर की अनुपलब्धता।

विवरण

- ''स्वर्ण अनमोल'' भिन्नाश्रय (हेट्रोसिस) प्रजनन द्वारा विकसित किया गया है। इसके फल गोल, लाल, हल्के हरे रंग के तने में एक साथ 5–6 के गुच्छे में फलते है। फल का वजन 60–70 ग्राम, टीएसएस 4.5–5.0 ब्रिक्स, अम्लता 0.30–0.35 प्रतिशत और एस्कार्बिक एसिड 40–42 एम.जी/100 ग्राम होता है।
- स्वर्ण अनमोल अनिर्धारित (Indeterminate) विकास (5.0–5.5 मी.) वाला, उच्च उपज क्षमता (160–180 टन/हेक्टेयर) वाला, बैक्टीरियल विल्ट प्रतिरोधी है और इसकी खेती सालों भर की जा सकती है।
- इसका ऊपज स्थानीय चेक (जी.एस. 600) की तुलना में 110 प्रतिशत अधिक पाया गया।

स्वर्ण अनमोल

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण अनमोल बिहार और झारखंड के पड़ोसी क्षेत्र में संरक्षित खेती के लिए जारी किया गया है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रभेद का लाभ-लागत अनुपात 3.95 : 1.0 है।

1.7 'स्वर्ण प्रफुल्य': मिर्च के लिए जीवाणु विल्ट प्रतिरोधी प्रभेद

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, जे. पी. शर्मा, पी. भावना एवं एस. कुमार।

समस्या / विवरण

मिर्च में बैक्टीरियल विल्ट एक गंभीर समस्या है जिसके कारण उत्पादकता घट जाती है।

विवरण

- बैक्टीरियल प्रतिरोधी स्वर्ण प्रफुल्य स्थानीय प्रभेद से प्योर लाईन चयन के माध्यम से विकसित की गयी है। पौधों की उँचाई औसतन 90–100 सेंमी होती है।
- स्वर्ण प्रफुल्य की उत्पादकता कृषक प्रक्षेत्र में 20–25 टन/हेक्टेयर है। जो चेक के.ए.–2 की तुलना में 34 प्रतिशत अधिक है।
- फल तैयार होने के बाद लम्बा (6.0–6.5 सेमी.), तीखा, गहरे हरे और पक जाने के बाद गहरे लाल रंग के होते हैं।

स्वर्ण प्रफुल्य

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण प्रफुल्य बिहार और झारखंड के पड़ोसी क्षेत्र जहाँ बैक्टीरियल विल्ट गंभीर समस्या है, में संरक्षित खेती के लिए विकसित की गयी है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रभेद का लाभ–लागत अनुपात 2.50 : 1.0 है।

1.8 'स्वर्ण अतुल्य' : सामान्य खेती द्वारा शिमला मिर्च की अधिक उपज देने वाली किस्म

वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, जे. पी. शर्मा, पी. भावना एवं एस. कुमार।

समस्या / विवरण

शिमला मिर्च की अधिकांश प्रजातियाँ संरक्षित खेती हेतु देश में तैयार की गई हैं। परन्तु खरीफ और रबी के मौसम के लिए सामान्य खेती द्वारा शिमला मिर्च की अधिक उपज देने वाली उपयुक्त प्रभेद का नितान्त अभाव है।

विवरण

- स्वर्ण अतुल्य एनबीपीजीआर द्वारा विश्व सब्जी केन्द्र, ताईवान से एकत्रित ईसी 596749 से प्योर लाईन चयन के माध्यम से विकसित की गयी है।
- इसके पौधे की ऊँचाई समान्यता 45–50 सेंमी होती है। इसके फूल एवं फल अगात विकसित हो जाते हैं। खरीफ और रबी मौसम के लिए सामान्य खेती द्वारा इस प्रजाति को आसानी से उगाया जा सकता है।
- स्वर्ण अतुल्य की उत्पादकता 40–45 टन/हेक्टेयर है जो की चेक (कैलीफोरनिया वन्डर) से 63 प्रतिशत अधिक है। यह प्रभेद पाउडरी और डाउनी मिलड्यू प्रतिरोधी भी है।
- इसके फल का वजन औसतन 90–100 ग्राम, लगभग गोल (4.5–5.0 सेंमी लम्बाई, 5.5–6.0 सेमी मोटाई), हरा तथा फल पक जाने के बाद पीला हो जाता है।

स्वर्ण अतुल्य

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण अतुल्य सामान्य खेती द्वारा बिहार और झारखंड के पड़ोसी क्षेत्र में उगाने हेतु उपयुक्त पायी गयी है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रभेद का लाभ–लागत अनुपात 2.66 : 1.0 है।

1.9 'स्वर्ण स्नेहा': लौकी की उच्च उपज देने वाली किस्म

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, जे.पी. शर्मा, पी. भावना एवं एस. कुमार।

समस्या / विवरण

गर्मी और बरसात के मौसम में अधिक उपज देने वाली उपयुक्त प्रभेदों की कमी।

विवरण

- स्वर्ण स्नेहा एनबीपीजीआर, नई दिल्ली से एकत्रित IC284939 से प्योर लाईन चयन के माध्यम से विकसित किया गया है।
- पौधे की लता 4.5 मी. लंबाई वाला, अग्रिम फूलने और फलने वाला प्रभेद है। इसकी खेती बरसात के मौसम के लिए उपयुक्त है।
- स्वर्ण स्नेहा की उत्पादकता 50–55 टन/हेक्टेयर है, जो की स्थानीय चेक (अरका बहार) की तुलना में 40 प्रतिशत अधिक है। यह प्रभेद पाउडरी और डाउनी मिलड्यू प्रतिरोधी है।
- फल हल्के हरे रंग के एवं फल का वजन 90–100 ग्राम तथा लंबाई 30–35 सेंमी होती है।

स्वर्ण स्नेहा

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण स्नेहा सामान्य खेती द्वारा बिहार और झारखंड के पड़ोसी क्षेत्र में उगाने हेतु उपयुक्त पायी गयी है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रभेद का लाभ–लागत अनुपात 2.57 : 1.0 है।

1.10 'स्वर्ण यामिनी' : करैले की उच्च उपज देने वाली किस्म

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, जे.पी. शर्मा, पी. भावना एवं एस. कुमार।

समस्या / विवरण

पूर्वी क्षेत्र में गर्मी और बरसात के मौसम के लिए उपयुक्त, उच्च पैदावार वाली करैले की प्रजाति की कमी।

विवरण

स्वर्ण यामिनी

- स्वर्ण यामिनी संकरण के बाद वंशावली चयन के माध्यम से विकसित की गयी है।
- पौधों की लंबाई 2.5–3.0 मी., अग्रिम फूल और फलने तथा बरसात के मौसम की फसल के लिए उपयुक्त है।
- स्वर्ण यामिनी की उत्पादकता 20 टन प्रति हेक्टेयर है जो की स्थानीय किस्म (अरका हरित) की तुलना में 49 प्रतिशत अधिक है। यह प्रभेद पाउडरी और डाउनी मिलड्यू प्रतिरोधी भी है।
- फल का वजन 60–70 ग्राम एवं उसका रंग गाढ़े हरे रंग का होता है।

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण यामिनी सामान्य खेती द्वारा बिहार और झारखंड के पड़ोसी क्षेत्र में उगाने हेतु उपयुक्त पायी गयी है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रभेद का लाभ–लागत अनुपात 2.40 : 1.0 है।

1.11 'स्वर्ण स्वानी' : सतपुतीया की उच्च उपज देने वाली किस्म

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, आर. एस. पान, जे. पी. शर्मा, पी. भावना एवं एस. कुमार।

समस्या / विवरण

पूर्वी क्षेत्र में सतपुतीया की खेती के लिए अधिक उपज देने वाली विभिन्न प्रकार की प्रजाति की कमी।

विवरण

- स्वर्ण स्वानी स्थानीय संग्रह से पंक्तिबद्ध चयन के माध्यम से विकसित किया गया था।
- पौधे की लंबाई 3.4 मी., अग्रिम फूल और फलने तथा बरसात के मौसम की फसल के लिए उपयुक्त है।
- स्वर्ण स्वानी की उत्पादकता 20–25 टन/हेक्टेयर है जो कि स्थानीय चेक में 42 प्रतिशत अधिक है। यह प्रभेद पाउडरी और डाउनी मिलड्यू प्रतिरोधी है।
- फल का वजन 35–45 ग्राम, समूह में एक साथ 6–8 फलते है।

स्वर्ण स्वानी

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण स्वामी सामान्य खेती द्वारा बिहार और झारखंड के पड़ोसी क्षेत्र में उगाने हेतु उपयुक्त पायी गयी है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रभेद का लाभ–लागत अनुपात 2.55 : 1.0 है।

1.12 झिंगली की अधिक उपज देने वाली किस्म

संबद्ध वैज्ञानिक

वी. एस. आर कृष्णा प्रसाद, आर. एस. पान, मथुरा रॉय, ए. के. सिंह, जे. पी. शर्मा और डी. पी. सिंह।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में झिंगली की अधिक उपज देने वाली किस्म की अनुपलब्धता।

विवरण

- "स्वर्ण मंजरी" का विकास संकरण के माध्यम से वंशावली के चयन के बाद किया गया। यह प्रजाति लंबे (15–20 सेंमी), लंबी धारी वाले हरे फल उत्पन्न करती है।
- स्वर्ण मंजरी (18–20 टन/हेक्टेयर) ने बहु स्थानीय प्रयोगों के दौरान प्रयोगात्मक प्रजाति पूसा नसदार से 30–40 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज की। इसका गूदा नर्म होता है, जिसमें रेशे काफी कम होते हैं और इसलिए यह उपभोक्ताओं को काफी पसंद आती है।
- "स्वर्ण उपहार" को भी संकरण के जरिए, वंशावली के चयन के बाद, विकसित किया गया। यह लंबे 15–20 सेंमी के छोटी धारी वाले हरे फल हैं। स्वर्ण उपहार ने 20–30 टन/हेक्टेयर उत्पादन दर्ज कर, परीक्षण प्रजाति पूसा नसदार से 40–50 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज कराई। इसका गूदा भी काफी नर्म होता है, और रेशे काफी कम और इसीलिए यह प्रजाति उपभोक्ताओं को काफी पसंद आती है।

स्वर्ण मंजरी

स्वर्ण उपहार

क्षेत्र / स्थिति

"स्वर्ण मंजरी" ए.आई.सी.आर.पी. द्वारा पंजाब, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, झारखंड और बिहार में पैदावार के लिए उपयुक्त पाई गई। "स्वर्ण उपहार" को संस्थान प्रभेद जारी समिति (आई.भी.आर.सी) ने झारखंड और बिहार में पैदावार के लिए जारी किया है।

लाभ–लागत अनुपात

इन दोनों प्रजातियों में लाभ–लागत अनुपात 2.20 : 1.0 पाया गया।

1.13 परवल की उन्नत प्रजातियाँ

संबद्ध वैज्ञानिक

वी. एस. आर. कृष्णा प्रसाद और डी. पी. सिंह।

समस्या

पूर्वी भारत में पैदावार के लिए परवल की उपयुक्त उन्नत प्रजाति की अनुपलब्धता।

विवरण

- स्वर्ण रेखा को मौजूदा जर्मप्लास्म (जनन्द्रव) के प्रतिरूप (क्लोनल) चयन के माध्यम से विकसित किया गया। ये लंबे आकार के (30–35 ग्राम), नर्म बीज सहित, पट्टेदार हरे फल होते हैं,
- स्वर्ण अलौकिक भी प्रतिरूप चयन के माध्यम से विकसित किया गया। इसके बेलनाकार फल (25–30 ग्राम वजन), हल्के हरे रंग के होते हैं।
- स्वर्ण रेखा ने पूर्वी क्षेत्र के पठारों और पहाड़ी परिस्थितियों में प्रति हेक्टेयर 30–35 टन की उपज दर्ज की है। लंबे धारीवाले फल उपभोक्ताओं द्वारा काफी पसंद किए जाते हैं।
- स्वर्ण अलौकिक ने पूर्वी क्षेत्र के पठारों और पहाड़ी परिस्थितियों में प्रति हेक्टेयर 25–30 टन प्रति हेक्टेयर की उपज दर्ज की। आयताकार हल्के हरे रंग के फल सब्जी के अलावा मिठाई बनाने के भी उपयोग में आते हैं।

स्वर्ण रेखा

स्वर्ण अलौकिक

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण रेखा और स्वर्ण अलौकिक संस्थान प्रजाति जारी समिति (आई.वी.आर.सी.) के माध्यम से झारखंड और बिहार में पैदावार के लिए जारी की गई।

लाभ–लागत अनुपात

इन दोनों प्रजातियों के लाभ–लागत अनुपात 1.90 : 1 आंका गया।

1.14 मध्य-मौसमी मटर की उन्नत प्रजातियाँ

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. एस. पान, ए. के. सिंह, जे. पी. शर्मा, एस. कुमार, बिकाश दास, मथुरा रॉय और वी. एस. आर. कृष्णा प्रसाद।

समस्या

चूर्णिल मिल्डयू प्रतिरोधी, मौसम के मध्य और बाद में पैदा होने वाली मटर की प्रजाति का अभाव।

विवरण

- "स्वर्ण अमर" मटर की उपलब्ध जर्मप्लास्म से प्योर लाइन चयन से विकसित की गई। इस प्रजाति के अतर्गत 10 सेंटीमीटर वाली लंबी अवतल आकार के नुकीले कोनों वाली, पतली फलियाँ होती हैं, जिनसे 50 फीसदी से भी ज्यादा गहरे हरे रंग के मटर के दाने निकलते हैं। निकले दाने स्वादिष्ट और गुणवत्ता योग्य होते हैं और उपभोक्ताओं द्वारा काफी पसंद किए जाते हैं।
- स्वर्ण मुक्ति प्रजाति बागवानी में वांछनीय फीमेल लाइन एचसी–17–11 (अतिसंवेदनशील) और चूर्णिल मिल्डयू प्रतिरोधी मेल लाइन एफसी–1 के वर्ण संकर से वंशावली चयन का पालन करते हुए विकसित की गई है। यह प्रजाति 9.25 सेंमी लंबी मध्यम आकार की, हल्की से अवतल, कुंठित शीर्ष वाली हल्की हरी फली पैदा करती है, जिसमें हल्के हरे रंग के बीजों की 50 फीसदी से भी ज्यादा उपज होती है। ये भोजन में गुणवत्ता लाने के काम में आते हैं और काफी स्वादिष्ट होते हैं।
- हाल के सालों में, स्वर्ण अमर (चूर्णिल मिल्डयू अंक–1.51) और स्वर्ण मुक्ति (चूर्णिल मिल्डयू अंक 1.58) ने अपनी गुणवत्ता, खस्ता फफूंद प्रतिरोध और ज्यादा उपज को लेकर झारखंड और बिहार के किसानों के खेतों में अपनी आवश्यकता प्रतिपादित की है। स्वर्ण अमर (22.19 टन प्रति हेक्टेयर) और स्वर्ण मुक्ति (20.19 टन प्रति हेक्टेयर) ने परीक्षण की जाने वाली प्रजाति की अपेक्षा 37.40 और 35.29 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज की है। दोनों प्रजातियाँ मैदानों में ठंड के मौसम के बीच में और अंत में लगाने पर भी बेहतर उपज देती हैं। इसी प्रकार पहाड़ों पर गर्मी की शुरुआत में भी उनकी पैदावार ली जा सकी है।

स्वर्ण अमर

स्वर्ण मुक्ति

क्षेत्र / स्थिति

किसानों के खेतों में जबर्दस्त उत्पादन और भोजन की बेहतरीन गुणवत्ता और स्वाद के कारण इसे उपभोक्ताओं द्वारा काफी पसंद किया जाता है और इन्हीं कारणों से स्वर्ण अमर को संस्थान की प्रजात जारी समिति (आई.वी.आर.सी.) ने इसे झारखंड और बिहार में व्यवसायिक खेती के लिए जारी किया। स्वर्ण मुक्ति को ए.आई.सी.आर.पी. (वी.सी.) की 23वीं समूह बैठक में झारखंड, बिहार और राजस्थान में पैदावार के लिए जारी किया गया।

लाभ–लागत अनुपात

इन प्रजातियों की पैदावार करने से आर्थिक लाभ–लागत अनुपात 1.55 : 1 आंका गया है।

1.15 स्नो मटर की उन्नत प्रजाति

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. एस. पान, ए. के. सिंह, जे. पी. शर्मा, एस. कुमार और बिकाश दास।

समस्या

पूर्वी प्रदेशों में उच्च पैदावार गुणवत्ता वाली स्नो मटर प्रजाति की अनुपलब्धता।

विवरण

इस समस्या को देखते हुए "स्वर्ण तृप्ति" प्रजाति विकसित की गई।

- इसकी फलियां सीधी और रेशेविहीन होती हैं।
- पूरी फली मीठी और खाने योग्य होती है
- फली की औसतन पैदावार 24–28 टन प्रति हेक्टेयर है और यह चूर्णिल मिल्डयू प्रतिरोधी होती हैं।

क्षेत्र / स्थिति

इस प्रजाति को सी.वी.आर.सी. ने झारखंड, बिहार और पश्चिम बंगाल में पैदावार के लिए जारी किया गया।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रजाति का लाभ लागत अनुपात 1.74 : 1 आंका गया है।

स्वर्ण तृप्ती

1.16 सब्ज़ी हेतु लोबिया की उन्नत प्रजाति

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. एस. पान, ए. के. सिंह, जे. पी. शर्मा, एस. कुमार, मथुरा रॉय और वी. एस. आर. कृष्णा प्रसाद।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में उपजाने के लिए वनस्पति लोबिया की उच्च उत्पादक गुणवत्ता वाली सार्वजनिक क्षेत्र के लिए उपयुक्त प्रजाति की अनुपलब्धता।

विवरण

- "स्वर्ण श्वेता" को ठाकुरगांव (बुर्मू ब्लॉक), झारखंड से एकत्रित घरेलू जर्मप्लास्म की प्योर लाइन के चयन की मदद से विकसित किया गया। यह प्रजाति सीधी, गोलाकार, सफेद रंग लिए हुए पुष्ट फलियाँ पैदा करती है। यह पकाने और खाने में काफी गुणवत्ता लिए हुए होती है।
- "स्वर्ण हरिता" को पश्चिम बंगाल के वर्दवान जिले के अंतर्गत जामलपुर से एनएटीपी (संयंत्र जैव विविधता) के अतर्गत जर्मप्लाज्म की शुद्ध लाइन चयन से विकसित किया गया। ये प्रजाति सीधी, गहरी हरे रंग की, काफी लंबी (50–60 सेंमी) की पुष्ट फलियाँ पैदा करती है, जो कि खाने में काफी स्वादिष्ट होती हैं।
- "स्वर्ण सुफल" को एन.बी.पी.जी.आर. जर्मप्लाज्म लाइन आईसी–202932 के प्योर लाइन चयन के माध्यम से विकसित किया गया। इस प्रजाति में हल्की हरे रंग की, सीधी, गोलाकार (बीजों के स्थान पर उठाव) और पुष्ट फली पैदा होती हैं। ये खाने में काफी स्वादिष्ट होती है।
- सभी प्रजातियों ने किसानों के खेतों पर बहु स्थानीय परीक्षण के दौरान बेहतर पैदावार क्षमता और उच्च श्रेणी की फलियाँ विकसित करने की क्षमता साबित की। स्वर्ण श्वेता (27.19 टन प्रति हेक्टेयर) और स्वर्ण सुफल (24.69 टन प्रति हेक्टेयर) ने परीक्षित की जा रही प्रजाति पूसा कोमल (17.82 टन प्रति हेक्टेयर) के मुकाबले क्रमशः 52.68 और 38.64 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज की। स्वर्ण हरिता (31.03 टन प्रति हेक्टेयर) ने अर्का गरिमा से किए गए परीक्षण (21. 45 टन प्रति हेक्टेयर) में 44.99 फीसदी ज्यादा पैदावार दर्ज की।

स्वर्ण श्वेता

स्वर्ण हरिता

स्वर्ण सुफल

क्षेत्र / स्थिति

"स्वर्ण श्वेता" और "स्वर्ण हरिता" को संस्थान की प्रजाति जारी समिति ने

झारखंड और बिहार में व्यावसायिक पैदावार के लिए जारी किया। स्वर्ण सुफला को सी.वी.आर.सी. ने एआईसीआरपी (वी.सी.) की 23वीं समूह बैठक के दौरान कर्नाटक और केरल के लिए जारी किया। ये प्रजातियाँ गर्मी और खरीफ के मौसम में पैदावार के लिए बेहतर हैं।

लाभ–लागत अनुपात

इन प्रजातियों के उपजाने से लाभ–लागत अनुपात 1.71 : 1 से लेकर, 1.84 : 1 के बीच दर्ज किया गया।

1.17 सेम की उन्नत प्रजाति

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. एस. पान, ए. के. सिंह, जे. पी. शर्मा, एस. कुमार, मथुरा रॉय और वी.एस.आर. कृष्णा प्रसाद।

समस्या

पूर्वी भारत में पोषण सुरक्षा के मद्देनजर राजमा की उच्च पैदावार वाली प्रजाति की अनुपलब्धता।

विवरण

- "स्वर्ण उत्कृष्ट" प्रजाति झारखंड के रांची जिले के ठाकुरगांव (बुर्मू ब्लॉक) से हासिल किए गए जर्मप्लाज्म के प्योर लाइन चयन से विकसित की गई है।
- स्वर्ण उत्कृष्ट (28.39 टन प्रति हेक्टेयर) ने परीक्षण की जा रही प्रजाति (उत्पादन 21.28 टन प्रति हेक्टेयर) के मुकाबले विभिन्न कृषक खेतों में 33. 43 प्रतिशत ज्यादा पैदावार दर्ज की है। इसकी फलियाँ सीधी, सपाट, हरी, पुष्ट और तारहीन होती हैं। यह ग्राहकों द्वारा काफी पसंद की जाने वाली प्रजाति है। यह प्रजाति बुआई के 120 दिन बाद पहली फसल के रूप में तैयार हो जाती है। यह शरद और शीत ऋतु में खेती के लिए उचित है।

स्वर्ण उत्कृष्ट

क्षेत्र / स्थिति

स्वर्ण उत्कृष्ट को व्यावसायिक तौर पर झारखंड, बिहार और उत्तर प्रदेश में खेती के लिए सी. वी.आर.सी. ने जारी किया है।

लाभ–लागत अनुपात

इस प्रजाति के फलों की पैदावार गर्मी में करने से लाभ लागत का अनुपात 1.58 : 1 और सर्दी में अनुपात 357 : 1 दर्ज किया गया।

1.18 सब्जी-सोयाबीन की उन्नत प्रजाति

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. एस. पान., ए. के. सिंह, जे. पी. शर्मा, एस. कुमार और बिकाश दास।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में उच्च पैदावार वाली सोयाबीन की प्रजाति की अनुपलब्धता।

विवरण

इस समस्या से निजात पाने के लिए "स्वर्ण वसुंधरा" को विकसित किया गया। इसके खास लक्षण हैं :

- फलियों में दो या तीन दाने होते हैं।
- ताजे हरे दानों की प्राप्ति 50 फीसदी से भी ज्यादा होती है।
- औसतन ताजी फलियाँ 15–20 टन प्रति हेक्टेयर की पैदावार देती हैं।

स्वर्ण वसुंधरा

क्षेत्र / स्थिति

इस प्रजाति को सी.वी.आर.सी. ने झारखंड, बिहार, पश्चिम बंगाल और ओडिशा में खेती के लिए जारी किया।

लाभ–लागत अनुपात

स्वर्ण वसुंधरा की लाभ–लागत का अनुपात 1.95 : 1 आंका गया।

1.19 बाकला की उन्नत प्रजनन लाईनें

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिंह, संतोष कुमार, आर. एलेंचेलियन और आर. एस. पान।

समस्या

बाकला का इस्तेमाल अपेक्षाकृत कम होता हैं। लेकिन यह अम्लीय और सोडिक मृदा में समान रूप से विकसित होती है। यह पूर्वी क्षेत्र के कई स्थानों पर पैदा होती है। यह रबि फसल की मुख्य दालों में से एक है, खासतौर पर बिहार में। लेकिन इसे बोने के लिए किसानों में उत्साह और जानकारी की कमी, इसके उत्पादन में बड़ी समस्या है। इसलिए ज्यादा उत्पादन और संसाधनों से कमजोर किसानों के लिए पोषण की सुरक्षा के मद्देनजर, इसकी प्रजातियों को विकसित करने की जरुरत महसूस की गई।

विवरण

इसके लिए दो लाइनों का चयन किया गया, जिनकी पैदावार क्षमता 5 टन प्रति हेक्टेयर हैं।

क्षेत्र / स्थिति

पंजीयन क्रमांक 2011410 को सिंचित पर्यावरण प्रणाली के लिए उपयुक्त पाया गया। दूसरी संभावनाओं वाली लाइन (पंजीयन क्रमांक 2011215) वर्षा आधारित और सिंचित कृषि पारिस्थितिकी दोनों प्रणालियों के लिए उचित पाई गई।

लाभ–लागत अनुपात

बाकला की भारत में औसत उपज 1.5 टन प्रति हेक्टेयर पाई गई और पूर्वी क्षेत्र में तो उत्पादकता और भी कम है। लेकिन उपर बताई गई प्रजाति का उत्पादन और उत्पादकता देश और विशेष तौर पर पूर्वी क्षेत्र में, 5.0 टन प्रति हेक्टेयर तक बढ़ा सकती हैं। किसान को प्रति हेक्टेयर 20,500 रुपए का अतिरिक्त लाभ हो सकता है।

1.20 सब्जी और फल हेतु कटहल की उन्नत प्रजातियाँ

संबद्ध वैज्ञानिक

विशाल नाथ, बिकाश दास और मथुरा रॉय।

विवरण

- स्वर्ण मनोहर की प्रजाति फल के उद्देश्य से विकसित की गई है। ये फल लगभग समान आकार के 13–15 किलो वजन के होते हैं, जिनका छिलका काफी आकर्षक रंग का होता है। गुच्छों में लगने वाले ये फल ठोस होते हैं और इनमें उच्च श्रेणी का खुशबूदार गूदा होता है (टीटीएस 20.0 बी और अम्लता अनुमान 0.09 प्रतिशत है) औसतन एक पेड़ 500 से 550 किलोग्राम के फल पैदा करता है। मई के मध्य में फल पूरी तरह से परिपक्व हो जाते है।
- स्वर्ण पूर्ति प्रजाति पाकशाला के लिए उपयूक्त पाई गई है। इसके फल गोलाकार, सम और मध्यम आकार के होते हैं (औसतन फल का वजन 3 से 5 किलो होता है)। ये आकर्षक हरे रंग के होते हैं। प्रति पेड़ औसतन 100 से 120 किलो फलों की पैदावार होती है। फलों की उपलब्धता का समय मई से जुलाई के बीच है।

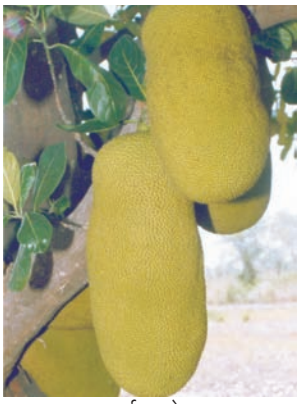

स्वर्ण मनोहर

स्वर्ण पूर्ति

क्षेत्र / स्थिति

इन दोनों प्रजातियों की झारखंड, छत्तीसगढ़ और आसपास के क्षेत्रों में पैदावार की सिफारिश की गई है।

आर्थिक आंकलन

20 साल में कटहल के फलों वाले 100 पेड़ों से ₹ 2.54 लाख का लाभ कमाया जा सकता है, जबकि कुल खर्च प्रति हेक्टेयर ₹ 5.40 लाख अनुमानित है।

1.21 'स्वर्ण वैदेही' : देश में मखाना की विकसित प्रथम प्रभेद

संबद्ध वैज्ञानिक

लोकेन्द्र कुमार एवं बी. के. गुप्ता।

समस्या / विवरण

भारत में मखाना की व्यवसायिक खेती मूल रूप में बिहार में की जाती है। परन्तु इसकी उच्च पैदावार वाली प्रजाति विकसित नहीं की गयी थी।

विवरण

- मखाना के व्यापारिक महत्ता को देखते हुए, ''स्वर्ण वैदेही'' प्रजाति विकसित की गयी है।
- यह किस्म, प्योर लाई चयन के माध्यम से विकसित की गयी है। इसकी उपज क्षमता कृषक प्रक्षेत्र में 2.8–3.0 टन प्रति हेक्टेयर है जो कि परंपरागत खेती की तुलना में लगभग 2 गुना अधिक है।
- यह प्रभेद तालाब एवं 30 सेमी गहरे पानी वाले खेत में भी उगाया जा सकता है।
- इसका उत्पादन बिहार के अलावा असम, छत्तीसगढ़ और ओड़िसा में भी सफल रूप से किया जा सकता है।

स्वर्ण वैदेही

क्षेत्र / स्थिति

यह प्रजाति परम्परागत जलाशयों के अलावा खेत में भी छिछले जल में भी सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। पहली बार मखाना की खेती परम्परागत जलाशयों के अलावा खेत में भी संभव की गयी है। मखाना के अलावा मत्स्य एवं सिंघाड़ा भी समेकित रूप में उगाया जा सकता है।

लाभ-लागत अनुमान

इस प्रभेद का लाभ–लागत अनुपात 1.61 : 1.0 है।

1.22 सुखाड़ सहिष्णु धान का उत्पादन

संबद्ध वैज्ञानिक

संतोष कुमार, आर. एलेंचेलियन, ए. अब्दुल हारिस, एस. एस. सिंह, एम. के. मीणा, शरद कुमार द्विवेदी एवं बी. पी. भट्ट।

समस्या

आज के बदलते परिदृष्य में भारतीय कृषि सुखाड़ के चलते अत्याधिक प्रभावित हो रही है। बार-बार एवं नियमित अंतराल पर सुखाड़ का आना कृषि उत्पादन में कमी का प्रमुख कारण बन गया है। धान, वर्षा आधारित पूर्वी क्षेत्र की महत्वपूर्ण खरीफ फसल है। पूर्वी भारत में 162 लाख हेक्टेयर में धान की खेती वर्षा आधारित है जिसमें से 42 लाख हेक्टेयर भूमी सुखे से अधिक प्रभावित रहती है। इन सुखे प्रभावित क्षेत्रों में धान का उत्पादन 1.5 टन प्रति हेक्टेयर से भी कम है। धान की प्रमुख उच्च उत्पादक प्रजातियों जो कि सिंचित क्षेत्रों के लिए विकसित की गई हैं, उन में सुखाड़ झेलने की क्षमता बहुत ही कम है। इसलिए ऐसी नई प्रजातियों का विकास, जो कि सूखा सहिष्णु हैं इन क्षेत्रों के दोहन के लिए अतिरिक्त मददगार होगी। ये प्रजातियॉ वर्षा आधारित ऊपरी क्षेत्र एव निचल भूभाग के क्षेत्र में सफलतापूर्वक पैदा की जा सकती हैं एवं किसानों को अच्छी उपज दे सकती हैं।

विवरण

धान की विकसित की गई ये प्रजातियॉ एवं उन्नत प्रजनन लाइनें सफलतापूर्वक वर्षा आधारित निचले वाले क्षेत्र और ऊपरी भूभाग में इस्तेमाल की जा सकती हैं, जो कि सूखे के तनाव को झेलने में सक्षम हो। सूखे को झेलने में सक्षम जिन प्रजातियों एवं उन्नत प्रजनन लाइने (मध्यम अवधि 110.125 दिन) को चयनित किया गया वे निम्नवत हैं: आर.सी.पी.आर.1.आई.आर. 83387–बी.–बी.–40–1 (4.34 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 5–आई.आर. 83376–बी.–बी.–24–2 (4.27 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 4–आई.आर. 84895–बी.–127–सी.आर.ए.–5–1–1 (4.11 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 21–आई.आर. 88964–24–2–1–4 (3.87 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर.11–आई.आर. 83387–बी.–बी.–27–4 (3.84 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 10–आई.आर. 83383–बी.–बी.–129–4 (3.71 टन/हेक्टेयर) एवं सहभागी (3.24 टन/हेक्टेयर)। ये प्रजातियॉ एवं उन्नत प्रजन लाइनें परीक्षण के आधार वाली प्रजातियों शुष्क सम्राट (3.04 टन/हेक्टेयर), एन.डी.आर. 118 (2.75 टन/हेक्टेयर), एन.डी.आर. 97 (2.70 टन/हेक्टेयर), नवीन (2.28 टन/हेक्टेयर) एवं आई.आर. 64 (1.65 टन/हेक्टेयर) से काफी अच्छा प्रदर्शन कर रही हैं। इसलिए ये प्रजातियाँ सूखे की आशंका वाले क्षेत्रों के लिए बेहतर साबित

हो सकती हैं। परंपरागत तरीके वाले धान की तुलना में इन विकसित की गई सूखा सहिष्णु प्रजातियों एवं उन्नत प्रजनन लाइनें में कम पानी लगता है। ये पूर्वी क्षेत्र के वर्षा आधारित उच्च भूमि और नीचली क्षेत्रों के पारिस्थितिकी तंत्र में धान की पैदावार बढ़ाने का बेहतरीन विकल्प है।

क्षेत्र / स्थिति

वर्षा आधारित तराई और उच्च भूमि वाले इलाके, जो कि सूखे के दबाव से अक्सर प्रभावित रहते हैं के लिए लाभदायक है।

आर्थिक आंकलन

करीब ₹ 14000–16000 प्रति हेक्टेयर।

1.23 मखाना की फसल प्रणाली में खेती

संबद्ध वैज्ञानिक

लोकेंद्र कुमार।

समस्या

मखाना सामान्यतः बारहमासी जल निकायों में उपजाया जाता है, लेकिन उत्पादकता कम होती है। फिर तालाब के तल से बीजों को जमा करना भी एक समस्या है। और इसके लिए अतिरिक्त मेहनत की आवश्यकता होती है। इन परिस्थितियों में विचार किया गया कि खेतों में पानी की कम गहराई पर मखाने की उपज की संभावनाएं तलाशी जाएं जिससे किसान को आर्थिक लाभ भी मिले।

विवरण

खेतों में मखाने के अलावा, दूसरी फसलें जैसे अनाज और चारे की भी सफलतापूर्वक पैदावार की जा सकती है। मखाना उपजाने के लिए 4–5 महीने पर्याप्त हैं, बाकि समय दूसरी फसलें ली जा सकती हैं। सामान्यतः मखाने का प्रतिरोपण अप्रैल के दूसरे सप्ताह में किया जाता हैं और अगस्त के दूसरे सप्ताह में फसल काट ली जाती है। इसके बाद, कम समय में पैदा होने वाली चावल की प्रजातियां यहाँ उपजाई जा सकती हैं। नवंबर में चावल की कटाई के बाद, दिसंबर मध्य तक यहाँ गेहूँ की फसल बोई जा सकती है। जो कि अप्रैल के दूसरे सप्ताह तक पककर तैयार हो जाती है। इसके बाद खेत को फिर मखाने की पैदावार के लिए तैयार किया जा सकता है। इस तरह पैदावार के फील्ड सिस्टम में एक साल में तीन फसलें लिया जाना संभव है। सामान्यतः मखाना आधारित फसल के युग्मों के अनुसार मखाना–सिंघारा, मखाना–बारसीम, मखाना–चावल और मखाना–चावल–गेहूँ आदि शामिल हैं।

क्षेत्र / स्थिति

यह तकनीक जल भराव और दलदली क्षेत्रों के लिए काफी लाभदायक है और साथ ही उन क्षेत्रों, जहाँ सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है, वहाँ भी इसका उपयोग किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

कुल आर्थिक लाभ विभिन्न फसलों के लिए निम्नलिखित हैं:

- सिंगाड़े की फसल के बाद मखाना की फसल ₹ 88,790 प्रति हेक्टेयर
- बारसीम की फसल के बाद मखाने की फसल ₹ 98,465 प्रति हेक्टेयर
- चावल और गेहूँ की फसल के बाद मखाने की फसल ₹ 1,22,570 प्रति हेक्टेयर

1.24 शीतकालीन मक्का रोपाई

संबद्ध वैज्ञानिक

संजीव कुमार, एम. के. मीणा और आर. एलेंचेलियन।

समस्या

सर्दियों में उत्तरी बिहार में मक्का रोपाई की परंपरा तेजी से बढ़ रही है और उसका कारण है चावल की देर से हो रही कटाई। चावल की कटाई नवंबर के अंतिम सप्ताह से लेकर दिसंबर मध्य तक जा रही है, जिससे गेहूँ उपजाने में देरी हो रही है। बिहार में शीतकालीन मक्का रोपाई अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से लेकर नवंबर के मध्य तक चल रही है। लेकिन इसकी पैदावार, खेतों में पैदा हुई अतिरिक्त नमी के कारण देरी से हो रही है। इन समस्याओं के निवारण के लिए मक्का का प्रतिरोपण बेहतर उपाय है। मक्का के अंकुरित बीज पौधशालाओं में तैयार कर, खेतों में रोप दिए जाते हैं, ताकि चावल की कटाई और मक्का की बुवाई के बीच का समय कम किया जा सके। इससे अधिकतम पैदावार सुनिश्चित की जा सकती है।

विवरण

एक हेक्टेयर में रोपाई के लिए 12–15 किलो बीजों की आवश्यकता पड़ती है, जिनसे पौध तैयार किए जा सकें। पौध तैयार करने के लिए 500 वर्ग मीटर का क्षेत्र सुनिश्चित किया जाता है, जो कि उठी हुइ क्यारी पर 3 किलो गोबर की खाद (एफवाईएम)/ वर्ग मीटर या करीब 1.5 किलो रेत डाल कर तैयार किया जाता है। प्रतिरोपण दिसंबर के अंतिम सप्ताह तक आसानी से किया जा सकता है। खाद 120 : 60 : 80 के अनुपात में क्रमशः नेत्रजन, फास्फोरस और पोटाशियम का इस्तेमाल किया जाता है। गोबर की खाद (5–10 टन), मक्का के पौध के प्रतिरोपण के 15 दिन पहले डालना चाहिए। प्रतिरोपण के 3–4 दिन बाद हल्की सिंचाई की जा सकती है, जिससे बेहतर फसल स्थापना हो सके, प्रत्यारोपण के झटके को कम करने में सक्षम रहे और पौध की मृत्यु दर भी न्यूनतम हो। लेकिन इसके लिए खेत में उपस्थित नमी के अनुपात का ध्यान रखना आवश्यक है। मानक कृषि से सम्बंधित प्रक्रियाएं अपनाएं, जैसे कि पर्याप्त सिंचाई, पौधों की सुरक्षा, खरपतवार प्रबंधन, कटाई आदि।

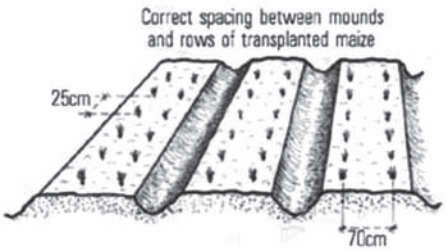

प्रयोग के परिणाम

पाँच सप्ताह पुराने पौध, जिसे रेत की मदद से या फिर उठाव वाले चबूतरे की तकनीक से विकसित किया

गया, ने अधिकतम पैदावार सुनिश्चित की। यह पैदावार प्रति हेक्टेयर 6.6 टन और 6.4 टन क्रमशः आंकी गई।

जल उपयोग दक्षता भी, उठाव वाली क्यारी की तकनीक से विकसित 5 सप्ताह पुराने पौध में अपेक्षाकृत काफी ज्यादा (176.2 किलोग्राम/हेक्टेयर/सेंटीमीटर) पाई गई। यह भी पाया गया कि पाँच सप्ताह पुराने बीज, जो किसी भी पद्धति से विकसित किए गए हों, चाहे रेत की मदद से या फिर उठाव वाली क्यारी की तकनीक से, जब खेतों में रोपे गए तो उन्होंने सीधे बोई गई मक्का की फसल की अपेक्षा फसल का समय 26 दिन कम कर दिया।

प्रतिरोपित मक्का के लाभ

- यदि इसे दिसंबर के अंत में भी रोपित किया जाता है तो भी मक्का की सामान्य पैदावार की पूरी संभावना रहती है, जबकि गेहूँ की फसल, यदि दिसंबर में बोई जाए तो पैदावार में काफी नुकसान हो जाता है।
- बीजों में भी 8–10 किलोग्राम की प्रति हेक्टेयर बचत होती है।
- यदि अक्टूबर में बोया जाए तो सीधी तौर पर बोई गई मक्का के बराबर ही पैदावार होती है, साथ ही प्रति हेक्टेयर 5–8 किलो बीज की बचत भी होती है।
- सीधे तौर पर बोई गई मक्का की तुलना में फसल 22–30 दिन पहले तैयार हो जाती है, जिससे अंतरवर्ती फसल उपजाने या फिर हरी खाद वाली फसलों के पैदावार की संभावना रहती है। इसमें 12–18 सेंटीमीटर सिंचाई जल की भी बचत होती है।

स्थान / परिस्थिति

यह तकनीक पूर्वी क्षेत्र की समुद्र से दूर बसी जमीनों और उन क्षेत्रों, जहाँ चावल की कटाई देर से होती है, के लिए लाभदायक है।

आर्थिक आंकलन

क्यारी बनाने के लिए ₹ 2500 प्रति हेक्टेयर और मक्का को प्रतिरोपित करने में ₹ 2250 प्रति हेक्टेयर का खर्च संभावित है, लेकिन इसकी पूर्ति दो बार की जाने वाली सिंचाई, (12 सेंमी पानी) और मिट्टी चढ़ाने के खर्च की बचत से हो जाती है।

1.25 डेयरी पशुओं के लिए स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों पर आधारित सस्ता चारा प्रबंधन

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. डे, बी. पी. एस. यादव और एन. चंद्रा।

समस्या

संतुलित सान्द्र (कॉनसेंट्रेटेड) दाना की बाजार में उच्च कीमतें।

विवरण

बिहार में डेयरी पशु, फसलों के अवशेष और थोड़े पोषण तत्वों (करीब 300–500 ग्राम प्रति दिन प्रति पशु) के आधार पर पालन किए जाते हैं। इस असंतुलित भोजन के कारण पशुओं का दुग्ध उत्पादन भी काफी कम होता है, यानी करीब 2.5–3.5 किलो/दिन/जानवर। इस समस्या के निदान के लिए गायों और भैसों के लिए संतुलित पोषण मिश्रण किया गया। इसके अवयव भी किसान के आसपास के क्षेत्रों में उपलब्ध संसाधनों को मिलाकर किए गए हैं। उपलब्ध अवयवों के आधार पर दो प्रकार के मिश्रण तैयार किए गए हैं। एक मिश्रण कूटे हुए अनाज को मिलाकर, जिसमें कूटकर बारीक किया गया मक्का/चावल की टूटन/गेहूँ (30 किलो), चावल/गेहूँ ब्रान (15 किलो), 15 किलो चावल ब्रान (जिसका तेल निकाला गया हो), 7 किलो सरसों की खल्ली, 12 किलो कपास के बीज की खल्ली, 18 किलो चना/मसूर की दाल/अरहर की चूनी, 2 किलो खनिजों का मिश्रण और 1 किलो नमक को मिलाकर तैयार किया गया। इसी प्रकार दूसरे मिश्रण में कूटकर बारीक किया गया 20 किलो मक्का/चावल की टूटन/गेहूँ, 25 किलो चावल/गेहूँ की ब्रान/चावल की पॉलिश, 10 किलो तेल निकाली गई चावल की ब्रान, 16 किलो सरसों की खल्ली, 15 किलो कपास के बीजों की खल्ली, 11 किलो चना/मसूर की दाल/अरहर की चूनी, 2 किलो खनिजों का मिश्रण और 1 किलो नमक। डेयरी गायों के पोषण के लिए यह कॉनसेंट्रेटेड 2 किलो की दर से और 1 किलो/2.5 किलो गाय के दूध के लिए और भैंसों के लिए 2 किलो पोषण और 2 किलो/1 किलो दूध के लिए आहार उपलब्ध कराया जाए।

स्थान / स्थिति

बिहार में इसे लागू किया जा सकता है

आर्थिक आंकलन

- घरेलू पोषण तत्व यदि घर पर बनाया जाए तो इसक कीमत करीब 30 फीसदी तक कम हो जाती है।
- असंतुलित आहार देने की अपेक्षा घर में तैयार पोषण तत्व देने से दूध के उत्पादन में 20–25 फीसदी तक की बढ़ोतरी हो जाती है।
- दूध उत्पादन की कीमत भी 25–30 फीसदी तक कम हो जाती है।

1.26 सूअर उत्पादन के लिए धान का चोकर/भूसी आधारित आहार कि व्यवस्था

संबद्ध वैज्ञानिक

जे. जे. गुप्ता, ए. डे एवं के. बर्मन।

समस्या

धान का चोकर/ब्रान आधारित आहार द्वारा सुअर की धीमी गति से वृद्धि।

विवरण

- धान का चोकर/भूसी भारत के पूर्वी क्षेत्रों में सुअर के लिए मुख्य (60–80 प्रतिशत) खाद्य सामाग्री है। धान का चोकर/भूसी फॉस्फोरस का अच्छा स्रोत है लेकिन इसका अधिकांश भाग अनुपलब्ध रूप में (फायटेट) रहता है। परिणामस्वरूप धान के चोकर/भूसी आधारित भोजन खाने पर सुअर की वृद्धि बहुत धीमी गति से होती है।
- व्यवसायिक फाइटेज एन्जाइम 20 ग्राम/100 कि. ग्रा. की दर से बढ़ने वाले सुअर के राशन में मिलाकर जिसमें 50 प्रतिशत धान का चोकर/भूसी हो, देना चाहि, ताकि धान के चोकर में उपस्थित बद्ध (bounded) फॉस्फोरस को आसानी से उपब्ध कराया जा सके क्योंकि विकास के समय ही सुअर को अधिक फॉस्फोरस की आवश्यकता होती है।

स्थिति

देश के सभी सुअर पालने वाले क्षेत्रों में।

आर्थिक आंकलन

फाइटेज एन्जाइम को संपूरक के रूप में खाद्यान्य में मिलाने से सूअर के भार में वृद्धि 14 प्रतिशत बढ़ जाती है और खाद्य का लागत मूल्य केवल ₹ 0.10 से 0.20 ही बढ़ता है।

1.27 मुर्गी के विकास में दही की भूमिका

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. डे, संजीव कुमार, मनोज कुमार और बी.पी. भट्ट।

समस्या

चूजा पालन में बेहतर आर्थिक लाभ के लिए पक्षियों के तेजी से बढ़ने और भोज्य पदार्थ के रुपांतरण में दक्षता की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही है। चूजों के तेजी से बढ़ने के लिए व्यवसायिक रूप से प्रोबायोटिक का इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन यह काफी महंगा है और ग्रामीण क्षेत्रों में आसानी से उपलब्ध भी नहीं है।

विवरण

दही भारत का परंपरागत आहार है, जिसे दूध से तैयार किया जाता है। दही के हर ग्राम में 12 लाख की संख्या में लेक्टोबासिलस होते हैं जो कि प्रोबायोटिक के सस्ते विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। व्यावसायिक प्रोबायोटिक के स्थान पर पीने के पानी के साथ दही का इस्तेमाल भी उतना ही असरकारी होगा। इसकी मात्रा रोजाना नए चूजे (0–3 सप्ताह पुराने) के लिए 0.5 ग्राम और बड़े (4–6 सप्ताह पुराने) के लिए 1 ग्राम का इस्तेमाल करें। इसके बाद 30–32 दिनों में पक्षियों का वजन करीब 1.5 किलोग्राम हो जाएगा।

प्रयोज्यता / स्थिति

भारत के पूर्वी प्रदेशों सहित सभी प्रदेशों के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है।

आर्थिकी आंकलन

- शरीर के वजन की बढ़ोतरी की प्रक्रिया 15 प्रतिशत तेज होती है।
- भोजन की दक्षता में 10 फीसदी की बढ़ोतरी होती है।
- बाजार की उम्र 8–10 दिन कम होती है।

1.28 मुर्गी पालन और बकरी के भोजन में मखाना की भूसी की भूमिका

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. डे, बी. पी. एस. यादव, पी. के. रे., पी. के. ठाकुर, उज्ज्वल कुमार, अभय कुमार, संजीव कुमार, ए. आर. रेड्डी, बी. के. झा, जनार्दन जी और नरेश चंद्रा।

समस्या

मखाना की भूसी मखाना प्रसंस्करण उद्योग में अपशिष्ट पदार्थ माना जाता है। वर्तमान में भारत में करीब 2000 टन मखाने की भूसी उपलब्ध है, जिसमें से 80 फीसदी बिहार में है। कुल मखाना भूसी में से केवल 20 फीसदी का ही ईंधन के रूप में इस्तेमाल होता है बाकि को अपशिष्ट पदार्थ मानकर नष्ट कर दिया जाता है।

विवरण

- मखाने की भूसी, मखाना प्रसंस्करण उद्योग का उतोत्पाद है। यह अपशिष्ट पदार्थ माना जाता है हालांकि इसमें पशुओं के लिए पौष्टिक भोजन के जरूरी अवयय उपलब्ध हैं।
- इसमें 8–9 प्रतिशत प्रोटीन, 20 फीसदी रेशे और 0.4 फीसदी वसा होता है।
- यह आंका गया कि मखाना की भूसी को चूजों के भोजन व्यवस्था में 6 फीसदी और बकरियों की भोजन व्यवस्था में 40 फीसदी तक शामिल किया जा सकता है।
- इसके लिए चावल की भूसी को अपदस्थ किया जा सकता है और इससे चारा सेवन, विकसित होने की दर और पोषक तत्वों के पाचन में कोई अंतर नहीं आएगा।

क्षेत्र / परिस्थिति

यह पूरे उत्तरी बिहार में लागू किया जा सकता है क्योंकि यहाँ मखाने की खेती बहुतायत में होती है।

1.29 पशुओं के आहार के लिए गैर-पारंपरिक अनाज का इस्तेमाल

संबद्ध वैज्ञानिक

जे. जे. गुप्ता, बी. पी. एस. यादव।

समस्या

जानवरों के लिए महंगे भोज्य पदार्थ और सान्द्र तत्वों की कमी की समस्या।

विवरण

- कुछ गैर परंपरागत भोज्य पदार्थ जैसे संक्रू (जॉब्स टियर्स), कुट्टू (बक व्हीट) और बड़ी सेम (जैक बीन) को पशुओं और मुर्गियों के भोजन आहार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे दालों और अनाजों पर दबाव कम होगा, जो कि मानव भोजन के इस्तेमाल में आ सकेंगीं।
- संक्रू और कुट्टू को सुअर, खरगोश और मुर्गियों के आहार में ऊर्जा के पदार्थ के रूप में 40–60 फीसदी तक इस्तेमाल किए जा सकते है।
- बड़ी सेम को प्रोटीन के स्त्रोत के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है हालांकि इसमें विषाक्त उपक्षार जैसे कैनेवानाइन की उपस्थिति होती है। लेकिन इसका विषाक्त पदार्थ हटाया जा सकता है। इसे खाने के सोडा ($NaHCO_3$) के द्रव (10 ग्राम/1) में 1 : 2 (w / v) में 80 डिग्री तापमान पर 40 घंटे रखने से यह विषाक्त पदार्थ रहित हो जाता है। इस परिष्कृत बीज को निर्वल्कन (छाल निकालना), सुखा कर मुर्गी पालन के भोजन के रूप में इस्तेमाल किया जा सका है। इसे आहार में 20 फीसदी तक मिलाया जा सकता है और इससे चूजों के विकास और मनोवृत्ति पर कोई असर नहीं पड़ता है।

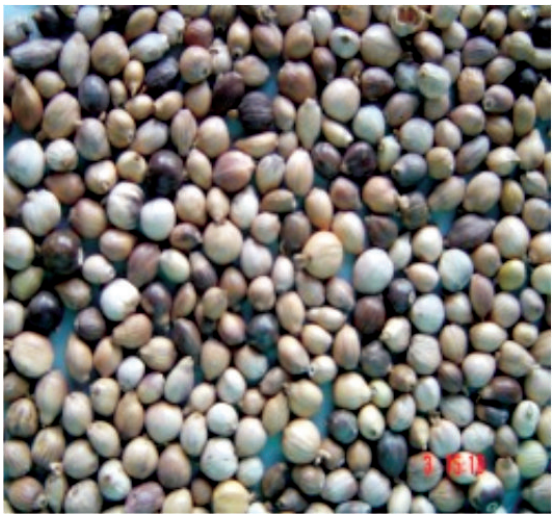

क्षेत्र / स्थिति

भारत के सभी पूर्वी और उत्तर पूर्वी प्रदेश

आर्थिक आंकलन

- संक्रू और कुट्टू को संसाधनहीन किसान पैदा कर, इसका आहार पशुओं को खिलाने के काम में ला सकते हैं।
- बड़ी सेम को पशुओं के लिए आहार निर्माता चारा तैयार किए जाने वाले आहार में शामिल कर सकते हैं। इसे परिष्कृत किए जाने का खर्च ₹ 1.00–1.50 प्रति किलो है।

1.30 उत्पादकता बढ़ाने के लिए मछली और सिंघाड़े का मखाने के साथ एकीकरण

संबद्ध वैज्ञानिक

बी. के. झा, लोकेंद्र कुमार, पीके ठाकुर और अभय कुमार।

समस्या

मखाना उत्पादन के लिए इस्तेमाल किए जा रहे जलाशयों की कम उत्पादकता।

विवरण

आय बढ़ाने और कुल लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य से मखाना + मछली + सिंघाड़ा का तालाब में एकीकरण किया जा सकता है। समय पर तालाब की सफाई, मांसाहारी मछलियों को महुआ तेल खल्ली (2.5 टन प्रति हेक्टेयर) की मदद से हटाना, रोपाई और अंतर भरने, जिससे मखाने और सिंघाड़े की फसल की अधिकतम पैदावार हो (10,000 पौधे प्रति हेक्टेयर), तालाब के बीचोंबीच आश्रय क्षेत्र (कुल जलीय क्षेत्र का 10 प्रतिशत) बनाना, जिससे मछलियों को पर्याप्त और उचित ऑक्सीजन की उपलब्धता हो, तालाब की मछलियों की विभिन्न प्रजातियों जैसे– रोहू, कतला, मृगल और सामान्य मछलियों (संख्या में करीब 5,000 प्रति हेक्टेयर) के बीजों का, मछलियों के बच्चों के रूप में 40:20:20:20 के अनुपात में एकीकरण, एक बार मार्च–अप्रैल के महीने में और फिर मखाना की तुड़ाई के बाद सितंबर के महीने में, दिसंबर–जनवरी में मखाना की फसल के पहले मछलियों को पकड़ना, सितंबर में मखाने की फसल की तुड़ाई के बाद और सिघाड़े की तीसरी फसल के रूप में अक्टूबर–नवंबर के महीने में पैदावार की जाए।

स्थान / परिस्थिति

उत्तरी बिहार में मखाने की पैदावार करने वाले क्षेत्र।

आर्थिक आंकलन

मछली, सिंघाड़ा और मखाना के एकीकरण से प्रति हेक्टेयर मछली उत्पादन 0.4 टन, मखाना

उत्पादन 1.06 से 2.06 टन और सिघाड़ा का उत्पादन 3.08 से लेकर 8.8 टन प्रति हेक्टेयर तक संभव है। मखाना, जो कि इस प्रक्रिया में प्राथमिक फसल होगी से प्रति हेक्टेयर 20,015 रुपए का लाभ मिल सकता है। इससे हर साल प्रति हेक्टेयर 240 मानव दिवस रोजगार भी पैदा होगा। मछली सहायक फसल होगी, जो प्रति हेक्टेयर ₹ 11,806 के हिसाब से अतिरिक्त आय देगी। इससे साल भर में प्रति हेक्टेयर 24 मानव दिवस का लाभ मिलेगा। सिंघाड़े के रूप में तीसरी फसल से प्रति हेक्टेयर ₹ 13,445 का लाभ मिलेगा। इसके साथ ही इसमें कुल 83 मानव दिवस का रोजगार भी पैदा होगा।

1.31 झींगा पालन के लिए मौसमी बंधन नहीं

संबद्ध वैज्ञानिक

डी. के. कौशल और पी. एम. शेरी।

समस्या

सर्दियों में झींगों की उच्च मृत्युदर और धीमी विकास।

विवरण

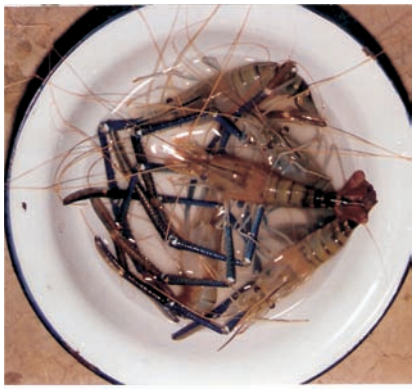

उत्तरी भारत में मीठे पानी के झींगे का पालन और खेती जून से दिसंबर के बीच, पानी के तापमान के आधार पर (18–30 डिग्री सेंटीग्रेड, जिसमें अधिकतम 27–31 डिग्री तक बदलाव स्वीकृत है) किया जाता है। सामान्य तौर पर ताजे पानी के झींगे की फसल दिसंबर के बाद उपलब्ध नहीं होती। बिहार में झींगों की एक प्रजाति स्कैंपी को मानसून के बाद और सर्दी के मौसम में पहली बार सफलतापूर्वक बढ़ावा दिया गया है। इसके लिए संबंधित तालाबों और ट्रेंच अगस्त से फरवरी के बीच पर्याप्त आश्रय दिया गया। इस अनुकूलक शोध ने स्कैंपी की पैदावार दिसंबर के बाद भी सुनिश्चित की गई है।

स्थान / परिस्थिति

बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में इसे लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

यदि मीठे पानी के इन झींगों की ठीक तरह से देखभाल और बेहतर जल प्रबंधन किया जाए तो ये प्रजाति प्रमुख खाद्य वस्तु के रूप में विकसित की जा सकती है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में बसे किसान शुरु में ₹ 2.30 लाख का निवेश कर, हर साल ₹ 2.0 लाख प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष शुद्ध लाभ ले सकते हैं।

1.32 कम ऊर्जा वाली जल संप्रयोग प्रणाली (एल.ई.डब्ल्यू.ए.) का विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

अतुल कुमार सिंह, ए. उपाध्याय, ए. अब्दुल हारिस, ए. इस्लाम, ए. रहमान, एस. आर. सिंह और ए. के. सिक्का।

समस्या

छोटे और खंडित भूमि धारकों के लिए दबाव सिंचाई व्यवस्था का अभाव।

विवरण

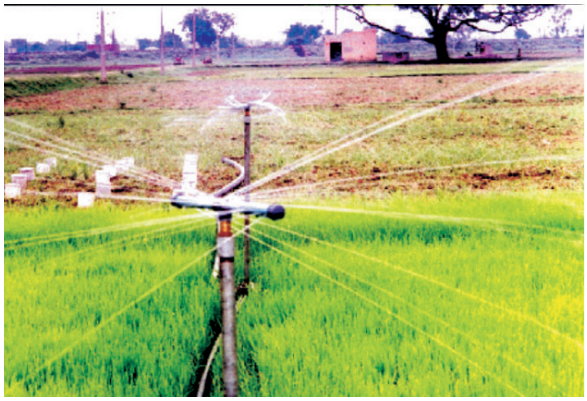

कम ऊर्जा वाली जल प्रणाली (लेवा) के संयंत्र में 0.4–0.6 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर के दबाव में 6–8 व्यास के पाइप के साथ संतोषजनक रूप से काम करने की क्षमता है जबकि व्यवसायिक रूप से उपलब्ध अधिकांश फव्वारे रूपी संयंत्र 2.0 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर के दबाव के उपर ही संतोषजनक रूप से काम कर पाते हैं। अतः यह प्रणाली न केवल कम क्षमता वाले पंपों के इस्तेमाल से सफलतापूर्वक चलाई जा सकी है, जिससे पंप के स्थापन के खर्च और परिचालन लागत में कमी आती है बल्कि इसमें कम दबाव वाले पाइप नेटवर्क का इस्तेमाल किया जाता है, जो कि दबाव वाली सिंचाई प्रणाली के कुल खर्च के 60–70 फीसदी खर्च में ही उपलब्ध हो जाता है। यदि इस संयंत्र की फव्वारा प्रणाली की दूसरे संयंत्रों से तुलना की जाए तो इसमें जहाँ चावल के खेत में 30–50 फीसदी उर्जा और पानी की बचत होती है, वहीं गेहूँ के खेत में तुलनात्मक रूप से पानी में 10–15 फीसदी और उर्जा में 30–50 फीसदी की बचत होती है। इन कारणों से किसानों के एक बड़े समूह को कम दामों और खर्च में उन्नत सिंचाई प्रणाली का इस्तेमाल कर सकते है। लेवा प्रणाली को गेहूँ, चावल, साग सब्जियां और दूसरी, करीब–करीब उगने वाली फसलों के लिए इस्तेमाल किया जा सका है। इसकी लागत कम है और यह उर्जा, पानी और समय की बचत भी सुनिश्चित करता है इस वजह से यह प्रणाली खासतौर पर खंडित जोत वाले छोटे और सीमांत किसानों के

लिए कुशल, प्रभावी और लाभप्रद है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

छोटे और सीमांत किसान, जिसके पास खंडित जोत है के अलावा उन क्षेत्रों में, जहाँ पानी की कमी है।

आर्थिक आंकलन

पूरी प्रणाली में ₹ 12,000–15,000 की लागत। लेकिन 1000 वर्ग मीटर वाले क्षेत्र या फिर 1 हेक्टेयर क्षेत्र के लिए प्राइम मूवर (स्थानांतरण के आधार पर) की कीमत इसमें शामिल नहीं है।

1.33 कम उर्जा वाले छिड़काव प्रणाली की अभिकल्पना और विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. रहमान, अतुल कुमार सिंह।

समस्या

कम दबाव पर फसल की सिंचाई करने के लिए दबावीय सिंचाई प्रणाली की कमी।

विवरण

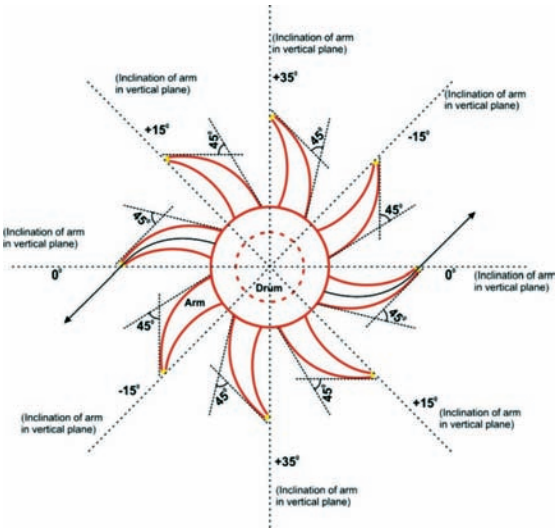

कम उर्जा वाली घुमावदार नोंक वाली सिंचाई प्रणाली को 0.6 से 1.0 किलोग्राम प्रति वर्गसेंटीमीटर के दबाव में, पानी फेंकने वाली चरखी का व्यास 9.2 मीटर से 11.2 मीटर, क्रिश्चियनसन यूनिफार्मिटी (पानी फेंकते समय समानुपाती वितरण) 68.72 : उपयोग दर 2.6 से 2.7 सेंटीमीटर प्रति हेक्टेयर (भुजाओं की संख्या 8, दबाव से पानी फेंकने वाली नली का अपर्चर व्यास 2.0 मिलीमीटर, प्रत्येक भुजा की लंबाई 4.0 सेंटीमीटर, ड्रम का अंडाकार आकार जिसका प्रधान अक्ष की लंबाई 5.5 और लघु अक्ष की लंबाई 3.5 सेंटीमीटर, भुजा के आधार का व्यास 1 सेंटीमीटर जो कि तांबे का बना हुआ है)। सॉकेट और बुश प्रणाली की मदद से उसे 1 मीटर की उंचाई वाले उठाव पर चढ़ा दिया जाता है। यदि कोई सिंचाई प्रणाली इस नोजल की मदद से विकसित की जाती है तब कम दबाव वाले के निर्धारण वाले पाइप का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका पानी फेंकने की गति ज्यादा है और आराम से खेतों में सिंचाई के उद्देश्य में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसकी गुणवत्ता के अनुसार यह साधारण है और आर्थिक रूप से व्यावहारिक है। इसे स्थानीय तौर पर बनाया जा सकता है और छोटे किसानों के लिए लाभप्रद है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

यह प्रणाली कहीं भी खेतों की सिंचाई के लिए इस्तेमाल की जा सकती है, जिससे पानी और उर्जा दोनों की बचत होगी। इस कारण किसान को आर्थिक लाभ भी होगा।

1.34 सिंचाई हेतु सौर उर्जा का उपयोग

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. रहमान।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र, खासतौर पर बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की अनियमित उपलब्धता के साथ ईंधन के आसमान छूते दामों, जो कि डीजल चलित पंप के लिए आवश्यक हैं, के कारण भूजल का इस्तेमाल कृषि के लिए करना मुश्किल हो गया था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए विचार किया गया कि भूजल निकालने के लिए सौर उर्जा का इस्तेमाल बेहतर विकल्प हो सकता है।

विवरण

सोलर पैनल, जिनकी क्षमता 3000 वॉट (चरम पर) है को सीधे चल आवृत्ति चालक (वीएफडी) से जोड़ दिया गया, जिससे बैटरी के इस्तेमाल की आवश्यकता नहीं पड़ी। एक 3 एचपी क्षमता का सबमर्सिबल पंप 6"/4" क्षमता के बोरवेल में 60 फीट नीचे रख दिया गया, जबकि स्थिर पानी का स्तर 45 फीट हो। जहाँ वार्षिक औसत प्रत्यक्ष सामान्य विकिरण (डीएनआई) 4.5–5.5 किलो वाट प्रति घंटा प्रति वर्गमीटर प्रतिदिन रहता है। पंप का औसत अवतारण 20,000 लीटर प्रति घंटे पाया गया। एक अतिरिक्त केन्द्रापसारक डीसी (सेंत्रिफ्युगल पंप), जिसकी क्षमता 2 एचप थी, को 1400 डब्ल्यूपी क्षमता के सोलर पंप के साथ लगाया गया, जिससे संग्रहण टंकी से पानी निकाला जा सके और फिर फसल की जरुरत के हिसाब से दबावयुक्त सिंचाई तंत्र के माध्यम से इस्तेमाल किया जा सके। इस पंप से पानी फेंकने की गति 25000 लीटर प्रति घंटा पाई गई, जबकि प्रेशर हेड 1.5 किलोग्राम वर्ग सेंटीमीटर था। एक बार सूर्य की किरणें मिलने के बाद दोनों पंप एक साथ चलाए जा सकते हैं।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

यह पर्यावरण सहायक प्रणाली है और सिंचाई हेतु भूजल के उपयोग के लिए खासतौर पर बिहार, पश्चिम बंगाल और असम में व्यावहारिक प्रणाली है, जहाँ भूजल का इस्तेमाल 22 से 40 प्रतिशत के बीच है क्योंकि यहाँ कृषि क्षेत्र के लिए उर्जा की उपलब्धता सीमित है।

आर्थिक आंकलन

शुरुआती निवेश ₹ 7 लाख का है, जिससे करीब 1,60,000 लीटर पानी प्रति दिन पम्प किया जा सकता है। यह मानकर कि सौर उर्जा प्रणाली का जीवन काल 20 साल होता है (हालांकि निर्माता इसका जीवन काल 25–30 साल होने का दावा करते हैं) प्रति लीटर पानी जो पंप किया गया और उसके प्रदाय, का औसत खर्च ₹ 0.001, यानी 1 पैसा प्रति लीटर से भी कम आता है।

1.35 झाड़ियों की अंतर-फसल के जरिए अम्लीय मिट्टी में सुधार

संबद्ध वैज्ञानिक

बी. पी. भट्ट, आर. एस. पान और एस. कुमार।

समस्या

वर्षा आधारित ऊँची भूमि की पारिस्थितिकी प्रणालियों में भूमि क्षरण, भूमि की उर्वरता में कमी और चारे की बेहद कमी कृषि उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव डालते है। पहाड़ी और पठारों में क्षारयुक्त भूमि, उपज को काफी हद तक ऋणात्मक रूप से प्रभावित करती है। इन समस्याओं को हल करने के लिए झाड़ियों की अंतर-फसल जो कि नाइट्रोजन बहुल थीं, का परीक्षण किया गया और इसके बाद उपयुक्त प्रजाति की सिफारिश की गई, जो कि बायोमास वृद्धि और मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में मदद करें।

विवरण

टेफ्रोसिया केंडिडा *(Telphrosia candida)* पूर्वी क्षेत्र के पहाड़ी और पठार वाली जमीनों पर पैदावार के लिए सबसे उपयुक्त पाई गई। दूसरी उपयुक्त प्रजातियाँ हैं फ्लेमिंजिया मेक्रोफिला, डेसमोडियम रेनसोनी, इंडिगोफेरा टिंकटोरिया और क्रोटालारिया डेड्रागोना। टेफरोसिया की घनी पंक्तियां 5–10 मीटर के अंतराल में ढ़लान के इर्द गिर्द लगाई जा सकती हैं। इनके बीच का अंतराल ढ़लान के प्रतिशत पर निर्भर करता है। छः माह बाद उन पेड़ों को घुटनों तक की उंचाई का छांट दिया जाता है। छांटा गया जैव इंधन, पशुओं के लिए या तो हरी घास या फिर चारे के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। पेड़ की संख्या 2.48 लाख होने पर, बायोमास की उपलब्धता 10.86 टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष होगी। यह गणना ताजे वजन के आधार पर की गई है। टेफ्रोसिया के पत्तों में नेत्रजन, फॉस्फोरस और पोटाश की उपलब्धता क्रमशः 3.67, 0.67 और 1.51 प्रतिशत आंकी गई। छांटा गया बायोमास, मिट्टी को 54.62 किलो नाइट्रोजन, 4.90 किलो फॉस्फोरस और 25.55 किलो पोटेशयम उपलब्ध कराता है। जैविक कार्बन प्रतिशत में भी करीब 40 फीसदी की बढ़ोतरी होती है। मिट्टी की पीएच गणना भी 4.67 से बढ़कर 5.16 हो जाती है। इस प्रजाति को बीजों के माध्यम से प्रचारित किया जा सका है। बीजों में अंकुरण आसानी से होता है। लेकिन बुवाई के पहले बीजों को ठंडे पानी में 24 घंटे तक डुबा कर रखें ताकि समान रूप से अंकुरण हो। औसतन 30 हेक्टेयर जमीन के पुनर्वास के लिए 1 किलो बीज पर्याप्त हैं। यह प्रजाति पूर्वी और उत्तर–पूर्वी प्रदेशों की अम्लीय

जमीन के पुनर्वास के लिए सबसे उपयुक्त है।

क्षेत्र / परिस्थिति

अम्लीय मिट्टी (पी.एच. 4.0 से 5.5 के बीच) एल्यूमिनियम प्रतिरूप (Al^+) प्रगतिशील तरीके से ध ीमे धीमे H^+ प्रतिरूप को बदल देते हैं और इस कारण तीव्र अम्लीय मिट्टी को एल्यूमिनियम विषाक्तता भी कहते हैं। खेत में चूना डालना अम्लता को हटाने का मानक तरीका है। मिट्टी की उपरी सतह के पीएच को 1 इकाई से बढ़ाने के लिए 5 टन प्रति हेक्टेयर $CaCo_3$ की आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया को प्रत्येक पाँच साल में दोहराना चाहिए। इसकी 10 टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष सूखा पदार्थ उत्पादन से तुलना की जा सकती है यानि 1.0 प्रतिशत Ca, जो कि 100 किलो कैल्शियम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष उपलब्ध करा सकता है जो कि 250 किलो $CaCo_3$ के समकक्ष है। यह आवश्यक चूने का 1/20 वां हिस्सा है। इस तरह टेफ्रोसिया से पैदा हुआ बायोमास मिट्टी के अम्लीकरण को हटाने को लेकर प्रभावी असर डालता है। झाड़ियों की अंतर–फसल के कचरे में उपलब्ध क्षार का पुनर्चक्रण अम्लता को निष्प्रभावी करने में मदद करती है।

1.36 मृदा और रोग प्रबंधन प्रौद्योगिकी

वैज्ञानिक

सुदर्शन मौर्या।

समस्या / विवरण

फास्फोरस पौधों के बढ़वार के लिए एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण पोषक तत्व है, लेकिन अम्लीय भूमि में अघुलनशील होने के कारण पौधों के लिए यह अनुपलब्ध हो जाता है।

विवरण

- स्फूर या फॉसफोरस पौधों के लिए आवश्यक सत्रह पोषक तत्वों में से एक है जिसकी कमी के कारण अम्लीय मृदा में कृषि–उत्पादन प्रतिबंधित हो जाता है अर्थात उपज में कमी आ जाती है। फॉस्फेट विलेयक कवक (पीएसएफ) अघुलनशील फॉस्फेट स्रोतो से पौधों को फॉस्फोरस की पूर्ति कराने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- फॉस्फेट की कमी वाली मृदा में प्रयोग करने के लिए फॉस्फेट विलेयक कवक को आसानी से द्विगुणित किया जा सकता है। यह पौधे की बढ़वार में वृद्धि के साथ–साथ उसमें प्रतिरोधक क्षमता का विकास तथा मृदा जनित विषाणुओं जैसे–फ्यूजोरियम, राईजोक्टोनिया, स्कलेरोटियम एवं स्कलेरोटिनिया का जैव नियंत्रण भी करता है।
- अकार्बनिक–अघुलनशील फॉस्फेट के स्रोत जैसे फेरिक फॉस्फेट तथा ट्राईकैल्शियम फॉस्फेट पर ट्राईकोडर्मा एवं पेनिसिलियम आधारित सूत्रीकरण (फॉरमूलेशन) का प्रयोग किया जाए तो फॉस्फेट विलयन क्षमता क्रमशः 50–67 एवं 40–45 प्रतिशत हो जाती है।

क्षेत्र / परिस्थिति

यह प्रौधोगिकी किफायती, प्रभावकारी एवं अम्लीय मिट्टियों में सरलतापूर्वक प्रयोग की जा सकती है।

प्रभाव एवं फायदे

इस प्रौद्योगिकी को अपनाने पर अम्लीय मृदा में (1) फॉस्फोरस की उपलब्धता (2) पौधों की बढ़वार में वृद्धि तथा (3) जैविक रोग प्रबंधन क्षमता में भी वृद्धि होती है।

आर्थिक आंकलन

₹ 400 प्रति हेक्टेयर या ₹ 100 प्रति किलो।

2.0 विकसित किए गए मॉडल/उत्पाद/प्रक्रिया

2.1 छोटी जोत/सीमांत किसानों के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल (आधा एकड़ पर आधारित प्रतिरूप)

संबद्ध वैज्ञानिक

संजीव कुमार, अभय कुमार, चुनचुन कुमार, ए. डे, उज्ज्वल कुमार, अतुल कुमार सिंह, ए. इस्लाम, ए. के. जैन और बी. पी. भट्ट।

समस्या

पूर्वी क्षेत्रों में बड़ी संख्या में किसान, भूमि विहीन या छोटे किसानों की श्रेणी हैं। उनकी आर्थिक स्थिति गरीबी रेखा से भी काफी नीचे है। उनके पास जमीन का एक टुकड़ा भर रहता है और वे अपने परिवार को पालने योग्य पैदावार भी नहीं उपजा पाते और परिवार की बसर बमुश्किल ही हो पाती है। इन परिस्थितयों में पशु पालन, घर के आंगन में मुर्गी पालन, बतख पालन, या फिर मछली पालन, मशरूम उपजाना आदि ऐसे विकल्प हो सकते हैं, जिनसे वे अपने जीवन स्तर को कुछ बेहतर बना सकें। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए एक समेकित कृषि प्रणाली का प्रतिरूप किसानों के खेत में बिहार में वैशाली जिले के चक्रमदास गांव में विकसित किया गया है।

विवरण

इस मॉडल में कृषि, भैंस पालन और घर के आंगन में मुर्गी पालन या फिर बतख पालन को प्रोत्साहन दिया गया, जिससे कि एक परिवार आवश्यकता के अनुसार कमाई कर ले। पूरी व्यवस्था 2000 वर्ग मीटर जमीन में विकसित की गई। 2000 वर्ग मीटर जमीन, यानि 0.5 एकड़ में से 1400 वर्ग मीटर में चावल, गेहूँ या फिर सब्जियां बोई गईं और 200 वर्ग मीटर में एक तालाब विकसित किया गया, इसमें पानी भरकर, मछली पालन की व्यवस्था की गई। जल स्त्रोत के तटबंध पर 10 बतख भी पाली गईं। दो भैंसे भी, जो कि 100 वर्ग मीटर स्थान में रहीं, भी इस मॉडल में शामिल की गईं, ताकि पोषक तत्वों का इसी चक्र में इस्तेमाल हो सके और भैंसें परिवारजनों को जीवन यापन में मदद कर सकें। इस प्रणाली में उपलब्ध अपशिष्ट पदार्थ से वर्मी कम्पोस्ट खाद भी पैदा की गई। तालाब के तटबंध, जो कि 1 मीटर चौड़ा था, सब्जियां और फल पैदा किए गए। इस विकसित मॉडल का विश्लेषण करने पर पाया गया कि इतने ही क्षेत्र में की जा रही परंपरागत खेती की तुलना में अब आय चार गुना बढ़ गई है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

छोटी जोत, परती भूमि, उबड़खाबड़ और खारिज की गई जमीन के लिए लाभदायक।

आर्थिक आंकलन

पूरे मॉडल को लागू करने से ₹ 73,442 का शुद्ध लाभ हुआ।

2.2 सिंचित मध्य/ऊँचाई पर स्थित भूमि के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल

(एक एकड़ पर आधारित प्रतिरूप)

संबद्ध वैज्ञानिक

संजीव कुमार, एस. एस. सिंह, चुनचुन कुमार, ए. डे, उज्ज्वल कुमार, मोहम्मद इदरिस, अतुल कुमार सिंह, पी. एम. शैरी, ए. के. जैन, एन. चंद्रा और बी. पी. भट्ट।

समस्या

बिहार में जमीनें मुख्य रूप से छोटे और सीमांत रकबों में बड़े पैमाने पर विघटित है। हालांकि 85 फीसदी किसान छोटे और सीमांत हैं, लेकिन उनके पास केवल 50 फीसदी ही जमीनें हैं। छोटे छोटे जमीनों के रकबे भी काफी विघटित और फैले हुए हैं। फिर जारी पट्टा प्रथा के कारण, जमीनों के स्थायी विकास और विकसित संसाधन के लिए भी निजी निवेश नहीं हो पाता। तेजी से सिकुड़ती जमीनों के कारण, कई सीमांत खेत आर्थिक रूप से लाभ देने की स्थिति में नहीं हैं। और इन्हीं कारणों से कम दामों वाले अनाज की पैदावार, जो कि यहाँ की फसल पद्धति का अहम हिस्सा है, में बदलाव नहीं आ पा रहा है और किसान व्यावसायिक रूप से लाभ देने वाली उपजों पर विचार नहीं कर पा रहे हैं।

विवरण

मुख्य घटक :

- फसल + बकरी + मुर्गी पालन

संबद्ध घटक :

- मशरूम + वर्मी कंपोस्टिंग

विभिन्न अवयवों को जमीन आवंटन

एक एकड़ मॉडल में बकरी पालन, मुर्गी पालन, मशरूम और वर्मी कंपोस्ट को फसलों से जोड़ा गया है ताकि अधिकतम आय हो और साथ ही यहाँ के उत्पाद भी इसी तंत्र में इस्तेमाल किए जा सकें। फसलों के घटकों में चावल–गेहूँ, चावल–मक्का, चावल–मसूर, चावल–सरसों को मैदानी फसलों और लोबिया–फूलगोभी–टमाटर, भिंडी–मटर–बंद गोभी और कद्दू–बंद गोभी–बैंगन (सब्जी आधारित फसल प्रक्रिया) का पालन किया गया। एक घटक का प्रतिफल दूसरे घटक के लिए इस्तेमाल किया गया जिससे पूरी प्रक्रिया व्यवहारिक रहे और लंबे समय तक चले और जमीन के स्वास्थ्य एवं संसाधन उपयोग दक्षता बनी रहें।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

पूर्वी भूभाग के सिंचित मध्य भूमि, ऊपरी भूभाग वाले, खासतौर पर सिंचित क्षेत्रों के लिए लाभदायक। इसे मॉडल को पूरे देश में, स्थानीय जलवायु, सामाजिक–आर्थिक परस्थितियों के हिसाब से कुछ बदलाव करते हुए, लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

एक एकड़ मॉडल का शुद्ध लाभ ₹ 1.28 लाख पाया गया।

2.3 निचली भूमि और सिंचित पारिस्थितिक तंत्र के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल
(दो एकड़ पर आधारित प्रतिरूप)

संबद्ध वैज्ञानिक

संजीव कुमार, एस. एस. सिंह, चुनचुन कुमार, ए. डे, उज्ज्वल कुमार, मोहम्मद इदरिस, अतुल कुमार सिंह, पी. एम. शैरी, ए. के. जैन, एन. चंद्रा और बी. पी. भट्ट।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में करीब 30–35 फीसदी क्षेत्र निचली भूमि पारिस्थितिकी तंत्र में स्थित है, जहाँ बिना इस्तेमाल किए जा रहे पानी के संसाधन बहुतायत में है, जिनका इस्तेमाल जल संबंधित गतिविधियों में किया जा सकता है जैसे कि मछली पालन, बतख पालन आदि। इस क्षेत्र में कई पानी के स्त्रोतों का या तो बिलकुल नहीं, या फिर आंशिक रूप से इस्तेमाल किया जाता है। जमीन उपजाउ होने के बावजूद इस क्षेत्र के किसान काफी गरीब हैं और खेती से बमुश्किल ही पर्याप्त कमाई कर पाते हैं। इस तरह माना जा सकता है कि यहाँ के किसानों में पोषण आहार की कमी के साथ ही साथ अर्थिक तंगी भी है। इस क्षेत्र में स्थानीय रोजगार भी एक बड़ी समस्या है और बड़ी तादात में परिवारों के लोग परिवार को अकेला छोड़कर (प्रोविजनल माइग्रेशन) कर रोजगार की तलाश में बाहर निकल जाते हैं। अतः कहा जा सकता है कि खेती प्रणाली दृष्टिकोण ही इस क्षेत्र के किसानों की आमदनी और जीवन स्तर सुधारने का विकल्प है।

विवरण

मुख्य घटक :

- फसल + पशु + मछली पालन

संबद्ध घटक :

- बतख पालन / वर्मी कंपोस्टिंग / मधुमक्खी पालन

विभिन्न घटकों को जमीन का विभाजन

दो एकड़ मॉडल में पशुपालन, मछली पालन, बतख पालन और वर्मी कंपोस्ट को, फसलों के साथ जोड़ दिया गया है ताकि अधिकतम आय हो और साथ ही यहाँ के उत्पाद भी इसी तंत्र में इस्तेमाल किए जा सकें। फसलों के घटकों में चावल–गेहूँ, चावल–मक्का, चावल–मसूर, चावल–सरसों को मैदानी फसलों और लोबिया–फूलगोभी–टमाटर, भिंडी–मटर–बंद गोभी और कद्दू–बंद गोभी–बैंगन (सब्जी आधारित फसल प्रणाली) का पालन किया गया। बागवानी की दृष्टि से केले, नींबू, अमरूद और पपीते, तालाब

के तटबंध और बागवानी क्षेत्र में उगाए गए। एक घटक का प्रतिफल दूसरे घटक के लिए इस्तेमाल किया गया ताकि जमीन के स्वास्थ्य या आर्थिक लाभ को ध्यान में रखते हुए पूरी प्रक्रिया व्यवहारिक रहे और लंबे समय तक चले।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

पूर्वी भूभाग के तराई वाले, खासतौर पर सिंचित क्षेत्रों के लिए लाभदायक। इस मॉडल को पूरे देश में, स्थानीय जलवायु, सामाजिक–आर्थिक परस्थितियों के हिसाब से कुछ बदलाव करते हुए, लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

दो एकड़ मॉडल से शुद्ध लाभ ₹ 1.80 लाख पाया गया।

2.4 पूर्वी पहाड़ी और पठारों के वर्षा आधारित ऊपरी भूभाग पारिस्थितिकी तंत्र के विकास के लिए बहु-स्तरीय बागवानी भूमि के उपयोग संबंधी मॉडल का विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

मथुरा रॉय, विशाल नाथ, रणबीर सिंह, बिकाश दास, पी. डे. और एन. एन. रेड्डी।

समस्या

- वर्षा आधारित ऊपरी क्षेत्रों में धान के बराबर की सीमित उपज।
- पूर्वी पठारी परिस्थितियों में परंपरागत फलों के बागानों का लंबा गर्भाकाल (5–6 साल) और कम उत्पादकता (5–6 टन प्रति हेक्टेयर धान के बराबर उपज)

विवरण

- इस तकनीक के अंतर्गत, फलों के बड़े छत्र वाले पेड़ जैसे की आम, लीची, आंवला और कटहल को 10 x 10 मीटर के अंतराल से मुख्य फसल के रूप में उपजाना, छोटे छत्र वाले ऐसे फल वृक्ष जैसे अमरूद, शरीफा, नींबू को उसी खेत में, दो पंक्तियों के बीच 5 x 5 मीटर के अंतराल से पूरक फसल के रूप में लगाना और बचे हुए स्थान पर सहरोपित फसल का लाभ लेना।

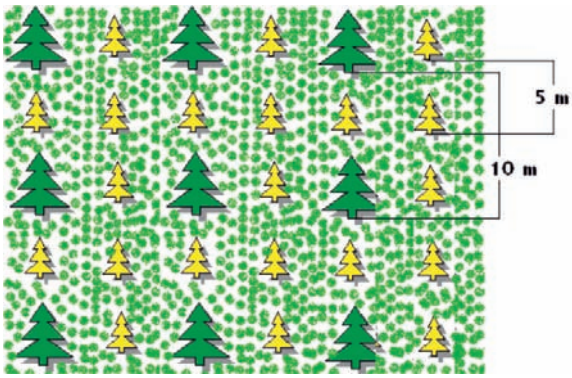

- इस पूरी प्रक्रिया में एक हेक्टेयर में 100 बड़े पेड़, और 300 छोटे आकार के पेड़ शामिल किए गए हैं।
- शुरुआत के सालों में कोई भी अंतराल वाली फसल बोई जा सकती है, लेकिन एक बार बड़े पेड़ अपने पूरे स्वरूप में आ गए, फिर इन अंतर फसलों के पौधों को हटाकर, छाया में भी विकसित होने वाले पौधों को रोपा जा सकता है, जैसे कि हल्दी, अदरक, ओल आदि।
- पूर्वी घाट की जलवायु परिस्थितिों के अनुसार इस बहु–स्तरीय मॉडल के 10 साल पुराना होने पर इससे 12 टन प्रति हेक्टेयर, चावल के बराबर उपज प्राप्त की जा सकती है

जबकि परंपरागत तरीके से फलों की खेती करने से उपज 4 टन प्रति हेक्टेयर तक ही सीमित रहती है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा और बिहार के पहाड़ी या उपरी सतह पर स्थित भूमि पारिस्थितिकी तंत्र के लिए सफल।

लाभ–लागत अनुपात

- आम आधारित बहुस्तरीय मॉडल 2.40 : 1
- लीची आधारित बहुस्तरीय मॉडल 4.86 : 1
- आंवला आधारित बहुस्तरीय मॉडल 2.51 : 1

2.5 मशरूम का पहाड़ी और पठारी क्षेत्रों में साल भर उत्पादन

संबद्ध वैज्ञानिक

जे. पी. शर्मा और एस. कुमार

समस्या

मशरूम में कुपोषण से लड़ने की पूरी क्षमता है और इसका प्रमुख कारण इसमें उपलब्ध पोषक आहार हैं। इसके अलावा यह काफी स्वादिष्ट भी होता है। पैदावार में आसानी, कम लागत और इसकी पैदावार से जुड़े अवययों की आसान उपलब्धता के कारण, मशरूम की खेती काफी आर्थिक लाभ देने और ग्रामीण युवाओं, खेतों में काम करने वाली महिलाओं और दूसरे बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार का अवसर प्रदान करता है।

विवरण

ऑयेस्टर मशरूम की उपलब्ध प्रजातियों में से प्लेरोटस फ्लोरिडा को अगस्त–नवंबर और जनवरी–मई में उपजाया जा सकता है। *प्लेरोटस सेजोर काजू, प्लेरोटस फ्लेबलाटस* को अगस्त से नवंबर और जनवरी से जून के महीने में उपजाया जा सकता है। इसी तरह पी ऑस्ट्रेटस प्रजाति को नवंबर से मार्च और ब्लू ऑयेस्टर मशरूम को नवंबर से जनवरी के बीच उपजाया जा सकता है। मशरूम की खेती के लिए निम्नलिखित कदम उठाना आवश्यक है।

- अवययों को रातभर प्रति 100 लीटर पानी में 10 ग्राम बेविस्टीन और 50 मिलीलीटर फार्माल्डीहाइड में भिगाना जरूरी है।
- अतिरिक्त नमी को बाहर निकालकर, इसे 60 प्रतिशत के स्तर पर लाया जाए।
- चार सतहों में 2 प्रतिशत की दर से स्पान को छेद वाले पॉलीप्रोपिलीन बैग में फैलाकर रखना।
- ऊष्मायन की प्रक्रिया करीब 20 दिन जारी रहे।
- पॉली बैग को हटाएं और रैक पर लटकाएं।
- मशरूम विकसित करने वाले कमरे की आद्रता 80% रखें।
- पैदा हुई मशरूम को तोड़कर एकत्रित करें। (मशरूम पॉली बैग के हटाए जाने के 7–10 दिन के अंतराल में दिखाई देना प्रारंभ हो जाते है जो 10 दिनों के अंतराल में तीन बार होता है)।

दूधिया मशरूम (*सैलोसायबी इंडिका*) को इसी कमरे में अप्रैल से अगस्त के बीच उपजाया जा सकता है। लेकिन जैसे ही उगना शुरु हो, यहाँ नीली रोशनी का प्रबंध करना आवश्यक होता है। इसे उपजाने यानि आवरण सामग्री की तैयारी के लिए तीन कदम जरूरी हैं।

- समान अनुपात में मिट्टी और अच्छी तरह से विघटित एफवाईएम, यानि गोबर की सड़ी खाद का मिश्रण। इसके बाद इस पर 4 प्रतिशत फर्मालीन छिड़ककर, इसे पॉलीथीन से दो दिन तक ढंक कर रखना, फिर बोरे में रखकर आवरण सामग्री को भाप से 1.5 से लेकर 2 घंटे तक अनुर्वर करना और कैल्शियम कार्बोनेट की मदद से पीएच 8 के आसपास बनाये रखना।
- पॉलीबैग में फुई के पूर्ण विकसित होने के बाद 1 इंट मोटा आवरण, आवरण योग्य मिट्टी की मदद से करें।
- आवरण के लिए इस्तेमाल की गई मिट्टी पर पानी का छिड़काव, जिससे वहाँ की नमी 80 फीसदी रहे।
- उपजे मशरूम की तुड़ाई, जो कि आवरण दिए जाने के 20 दिन बाद से पैदा होना शुरु हो जाते हैं और 1 महीने तक जारी रहते हैं

प्रयोज्यता / परिस्थिति

यह तकनीक पूरे झारखंड प्रदेश में अमल में लाई जा सकती है।

आर्थिक आंकलन

पॉली हाउस (20′ X 15′ X 10′) में ₹ 40,000 गैर आवर्ती खर्च के रूप में शामिल रहते हैं। आवर्ति खर्च प्रति फसल ₹ 13,000 करने पर ₹ 60,000 का लाभ कमाया जा सकता है। कृषक एक साल में 6 फसल ले सकता है।

2.6 मशरूम सूप मिश्रण का विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

अभय कुमार ठाकुर।

समस्या

मशरूम को लेकर मूल्य संवर्धन तकनीक का अभाव।

विवरण

प्लेरोटस सेजोर काजू और *प्लेरोटस फ्लोरडा* का मिश्रित सूखा सूप मशरूम के प्रसंस्कृत उत्पादों में से परंपरागत और लंबे समय तक सुरक्षित रहने वाला उत्पाद है। लेकिन प्रक्रिया से संबंधित जो भी तकनीक विकसित की गई है, उसे अभी भी मशरूम और टमाटर के मिश्रण वाला बेहतर सूखा तावरित मिश्रण वाले सूप की आवश्कता है।

- इस प्रक्रिया में मुख्य अवययों में मशरूम चूर्ण–20 फीसदी, टमाटर चूर्ण–20 प्रतिशत, गेहूँ का महीन आटा–35 प्रतिशत, दूध का पाउडर–10 फीसदी, मक्का का स्टार्च–10 फीसदी, प्याज का चूर्ण–1 फीसदी, सूखे बंद गोभी और गाजर के टुकड़े–4 प्रतिशत।
- रासायनिक परिरक्षक और इस तरह के कृत्रिम स्वाद बढ़ाने और वसा के रूप में योजकों का इसमें बिल्कुल इस्तेमाल नहीं होता।
- इसे 6 महीनों तक हवा निरुद्ध डब्बे में सुरक्षित रखा जा सकता है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

इस तकनीक को सभी मशरूम उत्पादक स्थानों पर इस्तेमाल किया जा सकता है।

आर्थिक लागत

₹ 300 प्रति किलोग्राम

2.7 जलीय उत्पादकता बढ़ाने के लिए समेकित कृषि और मछली पालन के साथ पानी की बहुउद्देशीय इस्तेमाल प्रणाली

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिक्का, पी. आर. भटनागर, ए. अब्दुल हारिस, डी. के कौशल, एल. के. प्रसाद, अमिताभ डे, ए. आर. रेड्डी और उज्ज्वल कुमार।

समस्या

पानी के अपव्यय के लिए कई कारण जिम्मेदार हैं। इनमें किनारों से हुआ रिसाव, विसर्जन केंद्र से पानी का अतिरिक्त बहाव, जमीन के उपर बहने वाले पानी का जमाव और जरुरत से ज्यादा सिंचाई आदि ऐसे कारण हैं, जिनसे नहर के तटबंध वाले निचले सतह की जमीन पर जल जमाव हो जाता है, जिससे जमीन की पैदावार क्षमता में कमी हो जाती है। दक्षिण बिहार में ऐसी परिस्थिति जुलाई से प्रारंभ होती है और पानी नवंबर के अंत तक स्थिर रहता है और कुछ मामलों में तो यह जनवरी के अंत तक जाता है। इस तरह के नहर के तटबंध वाले क्षेत्र, निचले इलाकों में बसे क्षेत्र और बाढ़ के खतरे वाले इलाके पानी और जमीन के बेहतर उपयोग के दृष्टिकोण से पानी की बहु–स्तरीय प्रणाली के उपयोग के माध्यम से बेहतर इस्तेमाल की जा सकती हैं।

विवरण

मध्यम गहरी जल जमाव वाली जमीन (0.5–1.0 मीटर) को पानी के ऐसे स्त्रोत के रूप में बदला जा सकता है, जिसका इस्तेमाल इस प्रणाली में प्रमुख अवयव के रूप में पानी और जमीन की उप्तादन क्षमता के विकास के लिए किया जा सकता है। खेत के करीब 20 फीसदी क्षेत्र को 2 मीटर गहरे दूसरे पानी के स्त्रोत में तब्दील किया जा सकता है। खोदी गई मिटटी को किनारों पर बिखेरा जा सकता है ताकि 3–4 मीटर चौड़ाई वाला मेड जैसा बन सके, जिसमें शिखा स्तर उच्चतम सतह से 50 सेंटीमीटर उपर हो, जिससे यह सुनिश्चित हो कि पानी सीमा तोड़कर बाहर नहीं बहेगा। बेहतर कीमत वाले बागवानी या शाक रोपण के उत्पादन के माध्यम से रिसाव वाले पानी के साथ अतिरिक्त जल का उपयोग कर ज्यादा लाभ सुनिश्चित होगा, जो कि अब तक करीब करीब अनुपयोगी साबित हो रहे थे। बीच में मछली पालन के माध्यम से भी लाभ लिया जा सकता है। पानी का खेती के लिए लगातार निकास कर, उसकी गुणवत्ता बनाए रखी जा सकती है। मछलियों को दूसरे अवययों, जैसे कि बतख पालन, मुर्गी पालन, सूअर पालन आदि से भी जोड़ा जा सकता है, जिससे उत्पादन और आमदनी, दोनों में बढ़ोतरी होगी।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

मौसम के हिसाब से नहरों के किनारे मौजूद जल भराव वाला क्षेत्र, नदी किनारे पर निचले स्तर पर बसा जल भराव का इलाका आदि। पूर्वी प्रदेशों में जल भराव वाला क्षेत्र 4.5 मिलिटन हेक्टेयर है।

आर्थिक आंकलन

कृषि और मछली पालन को मिलाने के बाद, दूसरे जल स्त्रोत की उपस्थिति में शुद्ध आमदनी ₹ 1,31,590 प्रति हेक्टेयर प्रति साल है। फलों के उपज का पूरी आमदनी में 56 प्रतिशत हिस्सा है। इसके अलावा मछली पालन में कुल आय का 27 फीसदी और साग सब्जियों में 17 फीसदी हिस्सा पाया गया।

2.8 जल भराव वाले क्षेत्रों में पानी के बहुउद्देशीय इस्तेमाल के साथ ट्रेंच सह रेज्ड बेड प्रणाली

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिक्का, पी. आर. भटनागर, ए. अब्दुल हारिस, डी. के. कौशल, एल. के. प्रसाद, अमिताभ डे, ए. आर. रेड्डी और उज्ज्वल कुमार।

समस्या

पानी के अपव्यय के लिए कई कारण जिम्मेदार हैं। इनमें किनारों से हुआ रिसाव, विसर्जन केंद्र से पानी का अतिरिक्त बहाव, जमीन के उपर बहने वाले पानी का जमाव और जरुरत से ज्यादा सिंचाई आदि ऐसे कारण हैं, जिनसे नहर के तटबंध वाले निचले सतह की जमीन पर जल जमाव हो जाता है, जिससे जमीन की पैदावार क्षमता कमी है। दक्षिण बिहार में ऐसी परिस्थिति जुलाई से प्रारंभ होती है और पानी नवंबर के अंत तक स्थिर रहता है और कुछ मामलों में तो यह जनवरी के अंत तक जाता है। इस तरह के इलाके पानी और जमीन के बेहतर उपयोग के दृष्टिकोण से बेहतर इस्तेमाल की जा सकती हैं।

विवरण

जल भराव वाले क्षेत्र में 1.0 मीटर रुके हुए पानी वाली खाइयाँ (ट्रेंच) इस तरीके से विकसित की जाएं कि खोदी गई मिट्टी वैकल्पिक पट्टियों में भरी जाए, जिससे कि सबसे उपर की सतह, संभावित बाढ़ के खतरे से उपर हो, जहाँ पर कृषि या बागवानी कार्य किया जा सके। इसके लिए दो तरह के मॉडल विकसित किए गए हैं। एक मॉडल घुमावदार जमीन संरचना पर आधारित है, जो कि नदी की परिस्थितियों का अनुसरण करे और दूसरा टापूनुमा (रेज्ड बेड), जो कि तालाब की परिस्थितियों का अनुसरण करे। पहला मॉडल नदी के बहाव जैसा बनाया जाता है, जिसमें खाई (ट्रेंच) घुमावदार होंगीं और पानी को एक तरफ से प्रवेश करने का रास्ता दिया जाएगा, इसका पूरा ध्यान रखते हुए कि मछली पालन को कोई नुकसान न पहुंचे। दूसरा मॉडल तालाब की परिस्थितियों के अनुकूल बनाया गया है, जिसमें जमीन पर टापूनुमा संरचना (रेज्ड बेड) तैयार की जाती है, जिसके बाद टापू पर लगाई गई किसी भी फसल, जिसमें ज्यादा कीमत देने वाली फसलें भी शामिल हैं, को पर्याप्त सुरक्षा उपलब्ध होती है। मछलियां भी टापू के इर्द गिर्द घूम सकती है। रेज्ड बेड पर केला और साग

सब्जियां उगाई जा सकती हैं और खाई नुमा गड्ढ़ों (ट्रेंच) में मछली पालन किया जा सकता है। इस मॉडल के अनुसार मछलियों की उपज 2 टन प्रति हेक्टेयर हो सकती है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

नहर, तालाब के किनारों पर, जहाँ मौसम के अनुसार जल भराव की स्थिति पैदा होती है। बिहार में ऐसा क्षेत्र, जहाँ जल भराव की स्थिति उत्पन्न होती है, 9.41 लाख हेक्टेयर है।

आर्थिक आंकलन

खाई और टापू प्रणाली (ट्रेंच सह रेज्ड बेड) के इस्तेमाल से करीब ₹ 81,000 प्रति हेक्टेयर, प्रति साल की शुद्ध आय आंकलित की गई है। फलों की फसल का आय में सबसे ज्यादा 54 फीसदी योगदान होता है, जबकि मछली पालन का 24 प्रतिशत और साग सब्जी उत्पादन का योगदान 22 फीसदी होता है। लेकिन सिंचाई की व्यवस्था भी खाई (ट्रेंच) में पानी का स्तर बनाए रखने और टापू (रेज्ड बेड) की फसल को पानी देने के लिए आवश्यक होती है, साथ ही जब नहरें सूख जाती हैं और जल भराव की गहराई कम होती है, तब भी इसकी आवश्यकता होती है। इसके लिए अतिरिक्त रूप से डीजल चलित पम्प की आवश्यकता होगी, जिस पर ₹ 10,000 प्रति हेक्टेयर का खर्च संभावित है।

2.9 नीची भूमि की चावल-गेहूँ प्रणाली में धान-सह-मछली पालन

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. के. सिक्का, पी. आर. भटनागर, ए. अब्दुल हारिस, डी. के. कौशल, एल. के. प्रसाद, अमिताभ डे, ए. आर. रेड्डी और उज्ज्वल कुमार।

समस्या

तराई में बसे धान के खेतों की मुख्य समस्या, मिट्टी और जल का कमजोर उत्पादन से निबटा जा सकता है। इसके लिए धान उप्तादन के साथ ही मछली पालन भी किया जाए, जिससे मिट्टी और पानी के संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल हो सकता है।

विवरण

तराई में बसी जमीन, जहाँ 30–35 सेंटीमीटर जल भराव है का इस्तेमाल चावल–मछली खेती के लिए किया जा सकता है। चावल के खेत का करीब 10 फीसदी हिस्सा, केंद्रीय शरण क्षेत्र में तब्दील किया जा सकता है, जिसकी गहराई करीब 1 मीटर होना चाहिए। चावल की बुवाई के दो सप्ताह बाद, मछली के बच्चे छोड़े जा सकते हैं। केंद्रीय शरण क्षेत्र सूखे के लंबे अंतराल के दौरान या पौध सुरक्षा अभियान के दौरान इनकी सुरक्षा करने में सक्षम रहेगा, इसके अलावा मछलियों को भी गतिशीलता के लिए ज्यादा स्थान उपलब्ध होगा। चावल की फसल के बाद, बड़ी विकसित मछलियों को निकाल कर, उनके स्थान पर दूसरी छोटी मछलियां यहाँ डाली जा सकती हैं, जो कि वहाँ अगले 2–3 महीने रखी जा सकती हैं। इससे मछलियों का वजन अधिक होगा और कुल उत्पादन बढ़ेगा।

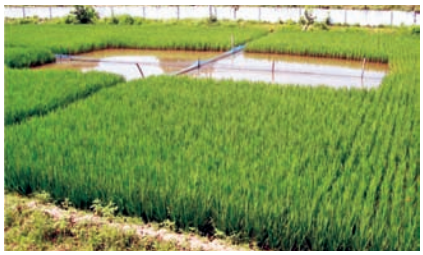

प्रयोज्यता / परिस्थिति

तराई के क्षेत्र में स्थित चावल के खेत, जहाँ मौसम के दौरान जल भराव की स्थिति पैदा होती है।

आर्थिक आंकलन

परंपरागत धान–गेहूँ की खेती के बजाए, इस प्रक्रिया से शुद्ध लाभ में 10–18 फीसदी की बढ़ोतरी होगी।

2.10 जल के संयुक्त इस्तेमाल के विकल्प हेतु निर्णायक युक्ति (Decision Support Tool)

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. उपाध्याय, आर. डी. सिंह एवं नरेश चंद्रा।

समस्या

वर्षा के जल, नहर और भू जल के अप्रभावी इस्तेमाल से खेतों में कम उत्पादन।

विवरण

नहर कमांड में सतह और भूमिगत जल के संयुक्त उपयोग की संभावना की खोज और बढ़ावा देने के लिए एक उपकरण (Decision Support Tool) को विकसित किया गया है। इसे लागू करने की तीन परिस्थितियां हो सकतीं हैं। (1) स्वयं का ट्यूबवेल हो (2) ट्यूबवेल चलाने के लिए किराए का पंप सेट और (3) ट्यूबवेल धारक से पानी की खरीद। इन तीनों का अध्ययन करने के बाद, किसान लाभ के विकल्प पर काम कर सकता है। जो खर्च इसमें शामिल हैं, उनमें ट्यूबवेल और नहर का सालाना तय खर्च और परिचालन खर्च, उपज और उत्पाद की कुल कीमत, नहर के कुल खर्च के अलावा, ट्यूबवेल के माध्यम से सिंचाई का अतिरिक्त खर्च, ट्यूबवेल से सिंचाई के अतिरिक्त खर्च की भरपाई के लिए फसल की अतिरिक्त पैदावार। इस निर्णय समर्थित साधन में जहां–जहाँ भी नहर कमांड क्षेत्र है, में इसे लाभ के साथ लागू किया जा सकता है। किसानों को संयुक्त प्रणाली के माध्यम से काम करने में यकीन दिलाने की पूरी क्षमता है।

प्रयोज्यता / स्थिति

इस युक्ति को उन सभी स्थानों पर लागू किया जा सकता है, जहाँ बढ़िया गुणवत्ता का उथला पानी, वाला जलीय परत उपलब्ध है।

आर्थिक आंकलन

किसानों को 0.8–1.2 टन प्रति हेक्टेयर ज्यादा की उपज मिल सकती है, यदि वे समय पर नर्सरी स्थापना, रोपाई और जल के संयुक्त उपयोग को प्रोत्साहित करें। ट्यूबवेल के माध्यम से की जाने वाली सिंचाई के अतिरिक्त खर्च के भरपाई अधिक उपज द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

Economical Analysis of Tubewell and Canal Irrigation

Fixed Cost of Pumping

	Tubewell Own	Tubewell Rented
Cost of Boring (Rs)	6200	0
Cost of Pump (Rs)	2000	0
Cost of diesel engine/ electric motor (Rs)	12000	0
Cost of fittings and accessories (Rs)	1200	0
Total Cost (Rs)	21400	0

	Tubewell Own	Tubewell Rented
Salvage value of total system (Rs)	5000	0
Interest Rate(%)	8	0
Annual interest cost (Rs)	656	0

Canal water chages Rs/Katha

Rice	Wheat	Other crops
2.75	2.34	3.75

Depreciation cost

	Tubewell Own	Tubewell Rented
Pump Life (years)	15	0
Pump salvage value (Rs)	400	0
Depreciation Cost of Pump (Rs)	107	0
Life of Diesel engine (years)	12	0
Salvage value of diesel engine (Rs)	4000	0
Depreciation cost of diesel engine (Rs)	667	0

	Tubewell Own	Tubewell Rented
Life of fittings and accessories (years)	3	6
Salvage value of fitting & accessories (Rs)	300	0
Depreciation cost of fitting & accessories (Rs)	300	0
Total depreciation cost (Rs)	1074	0
Total Fixed Cost (Rs)	1730	0

Cost of Irrigation

	Tubewell Own	Tubewell Rented	Canal
Operating Cost (Rs/hr)		60	
Fuel Consumption (L/hr)	1.5		
BHP of Engine	8		
Specific Fuel Consumption (L/BHP-Hr)	0.1875		
Irrigation during Kharif			
Area irrigated during Kharif Nursery (Katha)	8	8	8
Hours of operation to irrigate one Katha nursery once	0.6	0.6	0.6
No. of irrigations during nursery	2	2	2
Area irrigated during Kharif Rice (Katha)	80	80	80
Hours of operation to irrigate per Katha of Kharif Rice once	0	0	0.5
No. of Irrigations for Kharif Rice	0	0	7
Area irrigated during Kharif Crop1 (Katha)	0	0	0
Hours of operation to irrigate one Katha of Kharif Crop1 once	0	0	0
No. of Irrigations for Kharif Crop1	0	0	0
Area irrigated during Kharif Crop2 (Katha)	0	0	0
Hours of Operation to irrigate one Katha of Kharif Crop2 once	0	0	0
No. of Irrigations for Kharif Crop2	0	0	0
Total Area during Kharif Season (Katha)	80	80	80

Cost of Irrigation

Irrigation during Rabi & other crops	Tubewell Own	Tubewell Rented	Canal
Area irrigated during Rabi Crop1 (Katha)	60	60	60
Hours of operation to irrigate one Katha of Rabi Crop1 once	0.6	0.6	0.6
No. of Irrigations for Rabi Crop1	2	2	3
Area irrigated during Rabi Crop 2 (Katha)	0	0	0
Hours of operation to irrigate one Katha of Rabi Crop 2 once	0	0	0
No. of Irrigations for Rabi Crop 2	0	0	0
Area irrigated during Rabi Crop 3 (Katha)	0	0	0
Hours of operation to irrigate one Katha of Rabi Crop 3 once	0	0	0
No. of Irrigations for Rabi Crop 3	0	0	0
Total Area during Rabi atleast once Season (Katha)	60	60	60
Area irrigated during other Crop 1 (Katha)	0	0	0
Hours of operation to irrigate one Katha of other Crop 1 once	0	0	0

Exit | Save | Call Rec. | I< << >> >I Move Between Stored Rec. | Unknown Singh (Name) | RamNarayanPur (Location) | 123 (Outlet) | (Distributory) | Next Sheet

Cost of Irrigation

	Own	Tubewell Rented	Canal
No. of Irrigations for other Crop1	0	0	0
Area Irrigated during other Crop 2 (Katha)	0	0	0
Hours of operation to irrigate per Katha of other Crop 2 once	0	0	0
No. of irrigations for other Crop 2 (Katha)	0	0	0
Total area irrigated under other crops atleast once (Katha)	0	0	0
Rate of fuel (Rs/litre)	36.2		
Total fuel consumed (litre)	122.4		
Total Annual Cost of Fuel (Rs)	4431		
Pump and engine maintenance and repair charges (Rs)	1000		
Operator's wages per day (Rs)	40		
Days of operation of pump in a year	11		
Annual Operator's Wages (Rs)	440		
Total Operational Cost (Rs)	5871		
Total Fixed and Operational Cost (Rs	7601	4920	360
Do you pay for Canal Water also? ☑	7961		5280
Excess expenditure in irrigation as compared to canal (Rs)	7601	4920	
Yield of Kharif Rice (Kg/Katha)	60	60	45
Yield of Kharif Crop1 (Kg/Katha)	0	0	0
Yield of Kharif Crop2 (Kg/Katha)	0	0	0
Total yield of Kharif Rice (Kg)	4800	4800	3600
Total yield of Kharif Crop 1 (Kg)	0	0	0
Total yield of Kharif Crop 2 (Kg)	0	0	0
Cost of Kharif Rice (Rs./Kg)	4.65	4.65	4.65
Cost of Kharif Crop 1 (Rs./Kg)	0	0	0

Cost of Irrigation

	Own	Tubewell Rented	Canal
Cost of Kharif Crop 2 (Rs./Kg)	0	0	0
Yield of Rabi Crop 1 (Kg/Katha)	40	40	35
Yield of Rabi Crop 2 (Kg/Katha)	0	0	0
Yield of Rabi Crop 3 (Kg/Katha)	0	0	0
Total yield of Rabi Crop 1 (Kg)	2400	2400	2100
Total yield of Rabi Crop 2 (Kg)	0	0	0
Total yield of Rabi Crop 3 (Kg)	0	0	0
Cost of Rabi Crop 1 (Rs./Kg)	7	7	7
Cost of Rabi Crop 2 (Rs./Kg)	0	0	0
Cost of Rabi Crop 3 (Rs./Kg)	0	0	0
Yield of other Crop 1 (Kg/Katha)	0	0	0
Yield of other Crop 2 (Kg/Katha)	0	0	0
Total yield of other Crop 1 (Kg)	0	0	0
Total yield of other Crop 2 (Kg)	0	0	0
Cost of other Crop 1 (Rs/Kg)	0	0	0
Cost of other Crop 2 (Rs/Kg)	0	0	0
Cost of total produce (Rs/Katha)	559	559	454.25
Total cost of produce (Rs)	39120	39120	31440
Req. increase in rice equivalent yield (Kg/Katha) to compensate cost of Irrigation	11.68	7.56	

Comparison of costs considering own tubewell

Conjunctive use of Tubewell and Canal is Economical - Go ahead

Comparison of costs considering rented tubewell (Rs/hr)

Conjunctive use of Tubewell and Canal is Economical - Go ahead

Exit | Save | Back

2.11 नहर संचालन संबंधी निर्णायक युक्ति
(Decision Support Tool)

संबद्ध वैज्ञानिक

अदलुल इस्लाम, आशुतोष उपाध्याय, ए. के. सिंह और ए. अब्दुल हारिस।

समस्या

औसत सिंचाई क्षमता बढ़ाने और समानुपाती जल वितरण के लिए नहरों के त्रुटीपूर्ण सिंचाई कार्यक्रम पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है, जिससे नहरों के तटबंध वाले और कमांड क्षेत्र का पूरी तरह उपयोग नहीं हो रहा है और उचित तरीके से सिंचाई नहीं हो पा रही है। औसत सिंचाई क्षमता बढ़ाने के लिए इस क्षेत्र पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

विवरण

इस युक्ति को जलीय सिमुलेशन मॉडल 'कैनलमोड' और 'ऑप्टॉल' को मिलाकर विकसित किया गया, जिससे नहरों के इस्तेमाल की समानुपाती जल वितरण प्रणाली विकसित हो सके। यह प्रयोग सोन नहर कमांड क्षेत्र में रानीतालाब और बिक्रम लॉक के बीच किया गया। खरीफ 2005 के दौरान जब पानी छोड़ा गया, तो रानीतालाब के अध्ययन के दौरान पाया गया कि विभिन्न वितरिकाओं के बीच पानी का असामान्य वितरण था। हालांकि सर्वाधिक पानी के वितरण के दौरान सातवें सप्ताह में पर्याप्त जल वितरण हुआ। लेकिन इसके अलावा अन्य सप्ताह में आपूर्ति–माँग का अनुपात 0.37–0.97 के बीच रहा। इस डिजाइन के पानी के स्त्रोत पर लागू करने से करीब 11वें सप्ताह तक पर्याप्त पानी का समान वितरण हुआ और इसके अलावा अन्य सप्ताहों में आपूर्ति–माँग का अनुपात 0.62–0.82 के बीच रहा। 75 प्रतिशत और 50 प्रतिशत रूपांकित प्रवाह लागू करने से पर्याप्त जल आवंटन 9 और 8 सप्ताह रहा। इससे यह भी पता चला कि पर्याप्तता को और भी विकसित किया जा सकता है यदि मुख्य नहर से जुड़े निकासों में से 50 फीसदी को चक्रानुक्रम में इस्तेमाल किया जाए। नहर के कमांड क्षेत्र में जल उत्पादकता को बढ़ावा देने के लिए मंदावस्था में नहर के पानी के समानुपाती उपयोग के लिए द्वितीय जलाशय की आवश्यकता होगी।

प्रयोज्यता / स्थिति

पूर्वी प्रदेशों के नहरी कमांड क्षेत्र।

2.12 जलवायु परिवर्तन का धान और गेहूँ पर असर संबंधी मॉडल और बिहार के लिए संभावित अनुकूल कदम

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. अब्दुल हैरिस और आर. एलेंचेलियन।

समस्या

कई दिक्कतों के कारण पूर्वी क्षेत्र में कृषि उत्पादन अनुपात सीमित हो गया है। बिहार में खासतौर पर यह समस्या जल उपलब्धता एवं अप्रत्याशित मौसम के कारण है। मौसम के प्रत्येक मानदंड का फसलों के विकास पर प्रभाव संबंधी अध्ययन करना बोझिल होता है, जिसमें अत्यधिक मानव श्रम, समय और आर्थिक बोझ भी आता है। लेकिन ये निर्णय सहायक तंत्र (डीएसएस) या फसल मॉडल, तेज और भरोसेमंद तंत्र उपलब्ध कराते हैं, जिसके माध्यम से परिवर्तन लाने वाले इन संकेतों का फसल के विकास और पैदावार के सापेक्ष असर का अध्ययन किया जा सकता है। यह अध्ययन भी क्षेत्रीय आधार पर किया जा सकता है, जिससे भविष्य में पैदावार को लेकर भरोसेमंद आंकड़ों के हिसाब से निर्णय लिए जा सकें।

विवरण

इस अध्ययन से साफ है कि भविष्य में विभिन्न समयावधियों में धान और गेहूँ की पैदावार लगातार कम होने वाली है। धान की तीन प्रजातियों (साकेत–4, सीता और राधा) के चार केंद्रों (पूसा, मधेपुरा, पटना और सबौर) के कुल संभावित उत्पादन के आंकड़ों के आंकलन से पाया गया है कि उपज लगातार घट रही है। यह नुकसान 12 से 14 फीसदी के बीच है और सबसे ज्यादा नुकसान लंबी अवधि वाली धान प्रजातियों को हो रहा है।

पूसा में गेहूँ (एचयूडब्ल्यू 468 प्रजाति) की संभावित उपज बताती है कि आधार वर्ष के तुलना में 2050 और 2080 में यह क्रमशः 4 और 14 प्रतिशत कम हो जाएगी। मधेपुरा में पाया गया कि एचडी 2733 की उपज में 5, 13 और 21 फीसदी तक गिरावट क्रमशः 2020, 2050 और 2080 में हो सकती है। पटना और सबौर में गिरावट 2080 तक करीब 40 फीसदी दर्ज की गई।

लेकिन यदि धान की बुवाई का समय वर्तमान में लगाए जा रहे समय से 7 से 14 दिन पहले किया जाए, तो इससे बिहार के सभी जलवायु वाले और सभी समयावधि वाले क्षेत्रों में धान की पैदावार बढ़ाई जा सकती हैं। गेहूँ की बुवाई के लिए तो 180 किलो ग्राम बीज दर के साथ 14 दिन के बजाए 7 दिन पहले बुवाई भी सभी केंद्रों पर लाभप्रद होगी।

लागू करने वाली संभावित रणनीतियों में उपयुक्त प्रजाति, बुआई के समय में परवर्तन, बीज दर, रोपाई के समय बिचड़े की उम्र और रोपाई का तरीका शामिल हैं। सामान्य तौर पर कम और मध्यम समय में पकने वाली प्रजातियाँ भविष्य को देखते हुए, लाभकारी साबित होंगीं और इससे रबी की फसल को भी जल्दी बोने का समय मिल सकेगा, जो की तय रणनीति का एक अंग है।

प्रयोज्यता / स्थिति

बिहार के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों में मौसम में परिवर्तन के असर और स्वीकार्यता की भविष्यवाणी प्रमुख मुद्दा है। उत्तरी बिहार गेहूँ की पैदावार के लिए ज्यादा उपयुक्त है जहाँ अध्ययन के दौरान भविष्य को देखते हुए पैदावार में कम गिरावट का आंकलन किया गया है।

2.13 मक्का पर जलवायु परिवर्तन का असर और बिहार के लिए संभावित अनुकूल कदम

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. अब्दुल हारिस और आर. एलेंचेलियन।

समस्या

बिहार में मक्का की तीन फसल कुल 0.69 मिलियन हेक्टेयर में बोई जाती है और 2012–13 में इसका उत्पादन 2.33 मिलियन टन था। मौसम के प्रत्येक मानदंड का फसलों के विकास पर प्रभाव संबंधी अध्ययन करना कठिन होता है, जिसमें अत्यधिक मानव श्रम, समय और आर्थिक बोझ भी आता है। लेकिन ये निर्णायक सहायक तंत्र (डीएसएस) या फसल मॉडल, तीव्र और भरोसेमंद युक्ति हैं, जिसके माध्यम से परिवर्तन लाने वाले इन संकेतों का फसल के विकास और पैदावार के सापेक्ष असर का अध्ययन किया जा सकता है और जिससे भविष्य में होने वाले संभावित उत्पादन को लेकर विश्वसनीय आंकलन होता है और जो सभी परिस्थितियों में भोजन सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण है। इस तथ्य को ध्यान रखते हुए, खरीफ और रबी के मौसम में मक्का की पैदावार, मौसम में आ रहे बदवाल को ध्यान रखते हुए प्रतिरूपित की गई, जिससे कि परिवर्तन का बेहतर तरीके से आंकलन किया जा सके। इससे वर्तमान फसलों और फसल तंत्र, दोनों में सुधार आएगा।

विवरण

बिहार के विभिन्न स्थानों से, जो कि अलग–अलग कृषि जलवायु क्षेत्रों में हैं, से मौसम, मिट्टी और फसल संबंधी आंकड़े एकत्रित किए गए। इसमें हेडली मौसम केंद्र के मॉडल जीसीएम के तीसरे संस्करण (एचएडीसीएम 3), 2 दृश्य से कारक शामिल किए गए मूल मौसम में तापमान, वर्षा की जानकारी एकत्रित हुई। इंफोक्रॉप मॉडल को आंकलित फसल के आंकड़ो में समायोजित और मान्य किया गया, जिसके बाद विभिन्न स्थानों और समय सीमाओं के लिए अध्ययन किया गया। इस अध्ययन से साफ हो गया कि बिहार में खरीफ मक्का की पैदावार गिर रही है। रबी के दौरान बोई जाने वाली मक्का में भविष्य के समय सीमा में कुछ बेहतरी दिखाई दी। खरीफ की मक्का फसल में, सभी केंद्रों और परिस्थितियों में आधार पैदावार से गिरावट दर्ज की गई। सबसे ज्यादा गिरावट सबौर में 31 फीसदी तक देखी गई, जो कि 2080 का आंकलन है। रबी की फसल के दौरान बोई जाने वाली मक्का में, पैदावार में बढ़ोतरी 11, 19 और 37 फीसदी जोन I में और 9, 17 और 24 फीसदी जोन II में क्रमशः 2020, 2050 और 2080 के लिए आंकी गई। जोन III (साबौर और पटना) के लिए भी पैदावार में बढ़ोतरी आंकी गई। इसमें भी सबसे ज्यादा बढ़ोतरी साबौर में आंकलित की गई। खरीफ के मौसम में मक्का की बुआई को 7 दिन पहले करने से सभी केंद्रों पर उपज में बढ़ोतरी का आंकलन किया गया।

प्रयोज्यता / स्थिति

जलवायु में बदलाव की भविष्यवाणी और इन परिस्थितियों की अनुकूलता बिहार के विभिन्न कृषि जलवायु जोन के लिए उपयोगी है। तेजी से बदलते हुए रबी में मक्का की खेती जलवायु को देखते हुए एक बेहतर विकल्प है, जिसमें सीमांत क्षेत्रों में धान का विकल्प देने की भी क्षमता है।

3.0 तकनीक का मानकीकरण

3.1 धान की सीधी बुआई द्वारा संसाधन की बचत

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, ए. आर. खान, यू. एस. गौतम, उज्ज्वल कुमार, ए. अब्दुल हारिस, संजीव कुमार, एन. सुभाष, शिवानी, आर. सी. भारती, अनिल कुमार सिंह और पी. सुंदरम।

समस्या

पूर्वी सिंधु–गांगेय मैदानी क्षेत्र में धान आधारित कृषि प्रणाली में धान की पंकिल (पडलिंग) पद्धति में देर से रोपाई, अधिक लागत खर्च, मजदूरों का अभाव और कम शुद्ध आय, जो कि धान की घटती पैदावार के कारण है, प्रमुख समस्याएं हैं। इसके अलावा ठंड में पैदा होने वाली फसलों की उत्पादकता में भी गिरावट पाई गई है। इन सभी परिस्थितियों के मद्देनजर धान की सीधी बोवाई (डीएसआर) ही जरूरी समाधान है, जिसके माध्यम से इन समस्याओं से निजात पाई जा सकती है।

विवरण

डीएसआर को शून्य जुताई के साथ या इसके बगैर भी अमल में लाया जा सकता है। लेजर तकनीक से बराबर किए गए खेत, जिनमें सिंचाई व्यवस्था है, इस तकनीक के लिए बेहतर हैं। ज्यादा बारिश वाले मध्यतल स्थानों में बुवाई, पूर्व मानसूनी वर्षा के साथ ही मई के अंत से जून के मध्य तक की जा सकती है। मध्यतल स्थानों में पानी में डूबा क्षेत्र तीन दिन में खाली हो सकता है। बुवाई का सबसे उपयुक्त समय, लंबे समय की फसलों के लिए 25 मई से 15 जून के बीच, मध्यम समय वाली फसलों के लिए 10 जून से 25 जून और कम समय में पकने वाली प्रजातियों के लिए 20 जून से 15 जुलाई के बीच है। सामान्य शब्दों में बुवाई मानसून आने के 15–20 दिन पहले कर लेनी चाहिए। बुवाई के वक्त, खेतों को खरपतवार मुक्त होना चाहिए। इसके दो तरीके हैं। या तो हल्की सी जुताई कर लें, जिससे जंगली खरपतवार नष्ट हो जाएं, या फिर खरपतवार नाशक, जैसे की ग्लाइफोसाट का इस्तेमाल करें। इसे 1 किलो सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर के हिसाब से इस्तेमाल किया जा सकता है। डीएसआर बुवाई करते समय मिट्टी में पर्याप्त नमी, जो कि या तो सिंचाई के माध्यम से हो या फिर बारिश के माध्यम से, होना जरूरी है नहीं तो अंकुरण पर विपरीत असर पड़ेगा। यदि डीएसआर को बिना जीरो टिलेज (ZT) के माध्यम से किया जाना है तो बुवाई किसी भी ड्रिल के माध्यम से जुताई वाले खेतों

में की जा सकती है। डीएसआर के लिए एक हेक्टेयर में 20–25 किलो बीज पर्याप्त हैं।

जब फसलों के अवशेष खेत में उपलब्ध हों तो, टर्बो हैप्पी सीडर, रोटरी डिस्क ड्रिल, डबल डिस्क कल्टीवेटर और स्टार व्हील मशीनों की मदद से डीएसआर किया जा सकता है। ये मशीनें 7–8 टन प्रति हेक्टेयर फसलों के अवशेष के बीच पूर्ण सक्षमता से काम कर सकती हैं लेकिन इसके लिए 45–50 हॉर्सपॉवर के ट्रैक्टर की जरूरत होती हैं। ऐसे क्षेत्र, जहाँ फसलों के अवशेषों का प्रभाव ज्यादा नहीं है, धान की रोपाई शून्य टिल ड्रिल या फिर बहु–फसल ड्रिल की मदद से की जा सकती है। खरपतवार नियंत्रण के विकल्प तालिका–1 में दिए गए हैं।

डीएसआर न केवल वर्तमान फसल बल्कि बाद की फसलों के भी समय पर रोपाई और बोवाई सुनिश्चित करता है, जिससे निश्चित ही पैदावार में बढ़ोतरी होती है। मिट्टी की प्रकृति पर कोई असर नहीं पड़ता और गेहूँ, दलहन, तिलहन की फसलें आदि भी इसी जमीन पर लंबे समय तक ले सकते हैं।

प्रयोज्यता / स्थिति

मध्यम और निचली भूमि वाले धान की उपज आधारित तंत्र, जहाँ मई के मध्य से जून मध्य तक जमीन में सिंचाई या फिर वर्षा के माध्यम से पर्याप्त नमी उपलब्ध रहती है और अतिरिक्त जल भराव की स्थिति में पानी निकालने की व्यवस्था है।

आर्थिक लाभ

रोपाई की लागत 50 फीसदी (पंकिल प्रत्यारोपित 20,000 की तुलना में ₹ 10,000 तक कम हो जाती है), पंकिल के अभाव में जल की आवश्यकता 40–50 फीसदी कम हो जाती है। हालांकि पैदावार में 10–15 फीसदी की कमी होगी, लेकिन आर्थिक लाभ ज्यादा होने से कुल लाभ की स्थिति बनेगी। कुल मिलाकर किसान इसे अपनाने से फायदे में ही रहेगा।

rkfydk 1- /kku dh lh/kh cqvkbZ esa mi;ksx gksus okys dqN eq[; 'kkduk'kh ¼[kj–irokj uk'kh½ jlk;u

शाकनाशी का नाम	मात्रा/एकड़	इस्तेमाल का समय	इस्तेमाल की विधि	प्रभावित खर–पतवार
पेनडिमेथेलिन (स्टाम्प)	1333 मिली. 30 इ.सी. (400 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 1–2 दिन बाद	रसायन को 150–200 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सभी प्रकार के खरपतवार
बिसपायराबैक 10 प्रतिशत एस.पी. (नोमनी गोल्ड, एडोरा)	80–100 मिली. (8–10 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार
आक्साडायराजिल 80 डब्लू.पी. (टॉप स्टार)	50 ग्राम (40 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 1–2 दिन बाद	रसायन को 150–200 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सभी प्रकार के खरपतवार
एजिमुसलफ्यूरान 50 डब्लू.डी.जी.	24–28 ग्राम (912–14 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं सकरा पत्ती
प्रोपानील 35 इ.सी. (स्टाम्म)	45671 मिली. (1.6 किग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 2–15 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं सकरा पत्ती
प्रोपानील 35 इ.सी. (स्टाम) पेन्डिमेथेलिन 30 इ.सी. (स्टाम्प)	45671 मिली. (1.6 किग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 10–12 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार
मैट्सयूलफ्यूरॉन+ क्लोरोमूरॉन 20 डब्लू.पी. (एलमिक्स)	8 ग्राम (0.8+0.8 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार
पॉयराजोसूलफ्यूरॉन 10 डब्लू.पी. (साठी)	60 ग्राम (6 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 150–200 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार
कारफेनटराजोन 40 डी.एफ. (एफिनीटी)	20 ग्राम (98 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं सकरा पत्ती
2,4 डी. सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत	250 मि.ली. (200 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 20 दिन बाद	रसायन को 150–200 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं घनींचा
2,4 डी. एस्टॉयर सॉल्ट 80 प्रतिशत	526 मि.ली. (200 ग्रा. सक्रिय तत्व	बुआई के 20 दिन बाद	रसायन को 120 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं घनींचा

शाकनाशी का नाम	मात्रा / एकड़	इस्तेमाल का समय	इस्तेमाल की विधि	प्रभावित खर–पतवार
साइहालोपहोप (किलान्चर)	400 मि.ली. (40 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 10–12 दिन बाद	रसायन को 150–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	चौडी पत्ते वाले खरपतवार
इथ्रोक्सीसूल्फ्यूरॉन 15 डब्लू. डी. जी.	53 ग्राम (8 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं सकरा पत्ती
फेनोएक्सप्रोप+साफनर 6.7 इ.सी. (राईस स्टार)	447 मि.ली. (300 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 20 दिन बाद	रसायन को 150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं सकरा पत्ती, दुब
बेनसुल्फरॉन 60 डी.एफ. (लिन्डेक्स)	40 ग्राम (24 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सेज, चौडी पत्ते वाले खरपतवार एवं सकरा पत्ती
हॉलोसुल्फरॉन 75 डब्लू. जी.पी. (परमीट)	36 ग्राम (27 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सीडजेस, ऐनुअल्स, ब्रौडलिफ, बीड्स एक्सपेक्ट ग्रासी बीड्स
पेनोक्सूलाम	33 ग्राम (8 ग्रा. सक्रिय तत्व)	बुआई के 15–20 दिन बाद	रसायन को 120–150 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	चौडी पत्ते वाले खरपतवार
ग्लाईफोसेट (वीडर / वीडेक्स)	1.0 किलो ग्राम	बीजाई के 5–7 दिन पहले	रसायन को 500 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	सभी प्रकार के खरपतवार
पाराक्यूट	0.5 किग्रा. सक्रिय तत्व	बुआई के 1 दिन पहले	रसायन को 400 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करते है।	वहुवर्षिय पौधा

3.2 संरक्षित कृषि पर आधरित फसल प्रणाली

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, मोहम्द इदरिस, ए. आर. खान, अतुल कुमार सिंह, आर. एलेंचेलियन, एम. ए. खान और बी.पी. भट्ट।

समस्या

21वीं सदी में सबसे बड़ा चिंता का कारण है खाद्य सामग्री की बढ़ती हुई माँग की आपूर्ति करना और साथ ही प्राकृतिक संसाधनों की स्थिरता को बनाए रखना। इसके अलावा प्राकृतिक संसाधनों के बेहतर प्रबंधन से आजीविका बनाए रखने और इसे उन्नत करने, जीवन स्तर सुधारने और सतत विकास में भागीदार बनने का आधार प्राप्त होता है। प्राकृतिक संसाधनों की गिरावट से कृषि उत्पादकता, खाद्य सुरक्षा और जीवन स्तर पर सीधा खतरा मंडराने लगता है, खासकर विकासशील देशों में तो यह समस्या काफी ज्यादा आंकी जा रही है। कृषि संबंधी नवीनतम अनुसंधानों के कारण खाद्य उत्पादन में कई गुना बढ़ोतरी तो हुई ही है, साथ ही ऐसी प्रजातियां भी विकसित हुई हैं, जो उन्हीं संसाधनों में ज्यादा उपज देती हैं और जिनमें बीमारी और कीटों की प्रतिरोधी क्षमता है। अलग–अलग क्षेत्रों के लिए कृषि संरक्षण (सीए) आधारित उपयुक्त फसल तंत्र को विकसित किया जाना आवश्यक है, अर्थात जिसमें मिट्टी की प्रकृति में न्यूनतम परिवर्तन हो, अवशिष्ट बनाए रखने और फसल विविधीकरण को प्रोत्साहित किया जाए, जो कि उत्पादन के लाभ में संतुलन बनाए रखे, स्थिर, पर्यावरण के अनुकूल हो और किसानों को स्वीकार हो।

विवरण

कृषि संरक्षण (सीए) के अंतर्गत शून्य जुताई वाले सीधे बोए गए धान, लोबिया के अवशेषों में, शून्य जुताई वाले धान के अवशेषों में शून्य जुताई गेहूँ के अवशेषों में शून्य जताई वाला लोबिया, फसल प्रणाली सबसे उपयुक्त है। इससे संसाधनों की बचत होती है,अवशेष पुनः इस्तेमाल किए जाते हैं, और एक वर्ष में सर्वाधिक खाद्य उत्पादन दर्ज किया जाता है और इस तरह शुद्ध लाभ में बढ़ोतरी होती है।इस प्रक्रिया में 28 टन प्रति हेक्टेयर फसल अवशेषों को पुनः इस्तेमाल किया जाता है। इस से अब तक सुझाई गई सबसे बेहतरीन प्रक्रिया की तुलना में धान का उत्पादन 50 फीसदी, गेहूँ का 30 फीसदी बढ़ जाता है। इसके अलावा उत्पादन खर्च में भी कमी आती है

जिसमें जुताई, सिंचाई और पोषक तत्व प्रबंधन आदि का खर्च शामिल है।

शीत ऋतु में विविधिकरण के साथ कृषि संरक्षण (सीए) लोबिया के अवशेषों में शून्य जुताई वाले सीधे बोए गए धान, आलू + मक्का – लोबिया, एक बेहतरीन विकल्प माना गया है। करीब 24 टन प्रति हेक्टेयर प्रति साल फसल अवशेषों पुनः इस्तेमाल किया जाता है। धान का उत्पादन 80 फीसदी बढ़ जाता है, ठंड की फसल (मक्का + आलू) की उपज 100 प्रतिशत बढ़ जाती है और साथ ही सबसे बेहतर प्रणाली, जिसकी सिफारिश की गई है, की तुलना में उत्पादन खर्च में भी कमी आती है जिसमें जुताई, सिंचाई और पोषण तत्व प्रबंधन आदि का खर्च शामिल है।

दोनों ही फसल प्रणालियो में, फसल के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए जिस स्थान पर फसल उपजाई गई है, उसके हिसाब से सबसे बेहतर प्रक्रिया और पोषक तत्व प्रबंधन किया जाना चाहिए तभी इसका पूरा लाभ मिल सकेगा।

प्रयोज्यता / स्थिति

पूर्वी भारत की धान–गेहूँ फसल प्रणाली, जिसमें शीत ऋतु में विविधिकरण की संभावना है।

प्रणाली	कुल खाद्य उत्पादन (धान समानुपात टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष)	इस प्रक्रिया से शुद्ध आय (₹ प्रति हेक्टेयर)
धान – गेहूँ – मूँग, वर्तमान प्रक्रिया जिसकी सिफारिश की गई	14.25	61,886
धान – गेहूँ – लोबिया, कृषि संरक्षण प्रक्रिया के साथ	14.91	92,701
धान – मक्का + आलू– लोबियाः कृषि संरक्षण प्रक्रिया के साथ	23.16	1,18,349

3.3 आंशिक कृषि संरक्षण द्वारा संवर्धित धान गेहूँ फसल प्रणाली में गहरी ग्रीष्मकालीन जुताई

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. आर. खान, एस. एस. सिंह, एल. के. प्रसाद, ए. रहमान और आर. के. बत्ता।

समस्या

पूर्वी भारत में कई समस्याएं हैं जो कि धान के उत्पादन को सीमित करती हैं, इनमें बारिश, अचानक वर्षा या नहर के पानी से जल भराव की स्थिति, खरपतवार नियंत्रण आदि सबसे ज्यादा व्याप्त समस्याएं हैं, जिनसे धान का उत्पादन कम हो जाता है। यहां, धान को सीधे बोने के बजाए किसान पंकिल प्रत्यारोपित धान को ज्यादा महत्व देते हैं। इसके अलावा वे अवशेषों को सहेजते नहीं हैं बल्कि वे गेहूँ के लिए शून्य जुताई प्रक्रिया को, इसके लाभ देने की क्षमता के कारण, अपनाते हैं। इसके लाभों में समय पर बुवाई, संसाधनों की बचत और उच्च पैदावार क्षमता है। लेकिन इन परस्थितियों में भूमि को दो तरह के दबावों को झेलना पड़ता है यानी ठंड की फसल में कदवा का कुप्रभाव और बिना किसी अवशेष के शून्य जुताई वाली मिटटी। कदवा करना, हालांकि धान के लिए मददगार ही होता है, पोषक तत्वों एवं सिंचाई के पानी की रिसने से बचाता हैं लेकिन साथ ही मिट्टी समुच्चय को नुकसान पहुंचाता है, एवं सतह तथा उप सतह पर मिट्टी की शक्ति को बढ़ाती है, जलीय चालकता को घटाता है, और शीतकालीन फसलों के लिए भूमि को अपर्याप्त आवेशित करता है। इस प्रक्रिया को लगातार करने से कड़ी और ठोस सतह बन जाती है, जो कि खेती के लिए जरूरी हवा, पानी और पोषक तत्वों के आवागमन को अवरुद्ध करती है। इस कारण से कुछ समय बाद धान और गेहूँ की उपज, कमजोर भौतिक परिस्थितियों के कारण घट जाती है। इन परिस्थितियों में कुछ अंतराल के बाद गर्मी में गहरी जुताई बेहतर विकल्प है।

विवरण

मिट्टी के भौतिक दशा को सामान्य स्थिति में लाने के लिए गर्मी में नियमित गहरी जुताई (डीएसपी) बेहतरीन विकल्प है। अप्रैल के महीने में, खाली जमीन की गहरी जुताई, 30–45 सेंटीमीटर तक की जा सकती है। यह गहरी सतह में से बाधा उत्पन करने वाली सतह को हटाएगी और अंदर की मिट्टी को बाहर निकालेगी। इससे

मिट्टी, सूर्य की सौर उर्जा का अवशोषण करेगी और कीड़ों, खरपतवार और गोल कृमियों को कम करने, मारने में भी मदद करेगी। इस प्रक्रिया से मिट्टी ढ़ीली होती है, जिससे मिट्टी का पुराना मूल घनत्व वापस आ जाता है। डीएसपी की यह प्रक्रिया तीन साल में एक बार इस्तेमाल की जाना चाहिए, जो कि जमीन के गुण सामान्य परिस्थितियों में लाने में मदद करता है। इससे मिट्टी का स्वास्थ्य सुधरता है फलस्वरूप दोनों मौसमों में पैदावार में बढ़ोतरी होती है।

भारी मिट्टी में गहरी ग्रीष्मकालीन जुताई करने से यह कडी और सघन मिट्टी को तोड़कर उसे बेहतर भौतिक गुण प्रदान करता है, जिससे न केवल जड़ों का मजबूत विकास होता है बल्कि फसल की उपज भी बढ़िया होती है। खरपतवार, कीड़ें, कृमियों की उपस्थिति भी कम होती है क्योंकि धूप से निचली मिट्टी के धेलों की नमी सूख जाती है। पूरे खेत में नमी का अनुपात लम्बे समय तक बना रहता है।

प्रयोज्यता / स्थिति

धान की पंकिल रोपाई के बिना अवशेषों के रबी में शून्य जुताई।

आर्थिक आंकलन

डीएसपी का खर्च ₹ 3200, प्रति हेक्टेयर है, जिसमें धान में पानी की आवश्यकता 20–25 फीसदी कम हो जाती है एवं धान और गेहूँ की उत्पादकता में 15–20 फीसदी की बढ़ोतरी होती है।

3.4 कदवा के बिना धान की यांत्रिकी रोपाई का मानकीकरण

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, पी. सुंदरम, संजीव कुमार, चुनचुन कुमार और उज्ज्वल कुमार।

समस्या

धान की रोपाई और कटाई के लिए मजदूरों की कमी, जल की समस्या, उर्जा संकट और शीतऋतु में कम पैदावार का संकट, जो कि मिट्टी संघनन और मिट्टी की संरचना के नष्ट होने के कारण होती है। और इसका प्रमुख कारण है कदवा कर धान की रोपाई करना।

विवरण

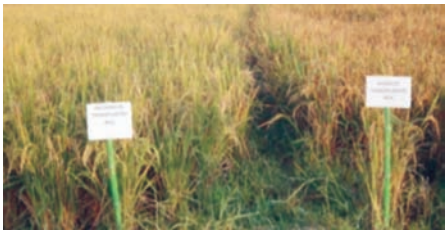

धान की यांत्रिकी रोपाई एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें विशेषतौर पर विकसित किए गए धान के छोटे पौधे चटाई की तरह (चटाई की तरह नर्सरी) उगाये जाते हैं और मशीन द्वारा पौध की रोपाई की जाती है। यह प्रक्रिया स्व–यांत्रिक धान प्रत्यारोपण की मदद से की जाती है, जिसमें पौधों को रोपने की दूरी पूर्व–नियोजित रहती है। एक मजदूर एक दिन में करीब 500 वर्ग मीटर क्षेत्र में रोपाई करता है, जबकि स्व–यांत्रिक धान प्रत्यारोपण यंत्र एक दिन में 4 एकड़ की रोपाई कर सकता है। पौधे मिट्टी के मिश्रण की सतह पर उगाये जाते हैं, जिसे ठोस सतह पर बिछाया जाता है और पौधों की रोपाई के समय, पूरी सतह को एक चटाई की तरह उखाडा जाता है। 1 हेक्टेयर में पौधे रोपने (2–3 पौधे / प्रत्येक हिल पर, 20 x 20 सेंटीमीटर की दूरी पर), के लिए 18–25 किलो प्रति हेक्टेयर बढ़िया गुणवत्ता वाले उपचारित बीजों को इस्तेमाल करें जिसमे 80 फीसदी से ज्यादा अंकुरण हो। नर्सरी बेड 20 मीटर लंबी, 1.2 मीटर चौड़ी और 10–15 सेंटीमीटर ऊँची समतल जमीन पर तैयार की जाती है। या प्रत्येक 1 हेक्टेयर, जहाँ कि पौधे लगाने हैं, के लिए 100 वर्ग मीटर की नर्सरी तैयार करें। खरपतवार मुक्त खेत से मिट्टी लें और इसे दो जालों वाली छलनी से छाने। इसके बाद छानी गई मिट्टी, गोबर की सड़ी खाद या वर्मी कंपोस्ट या फिर विघटित प्रेस मड के साथ 4:1 का मिश्रण तैयार करें। इसे अच्छे से मिलाने के बाद, इस मिश्रण को प्लास्टिक की पन्नी पर 1.5 से 2.0 सेंटीमीटर की सतह बनाते हुए बिछा दें। प्रति बेड (1.2 x 20 मीटर) बीज दर जो कि 1 एकड़ के लिए पर्याप्त है,

खुली परागण किस्मों (ओपीवी) के लिए 12 किलो होना चाहिए और संकर प्रजाति के लिए 9 किलो होना चाहिए। फैलाने के बाद, बीजों को पहले से तैयार किये गए मिट्टी के मिश्रण से ढ़ंक दें। यह काफी हल्का होना चाहिए और बीज दिखाई देने चाहिए। इसके बाद इसकी सिंचाई बहुत महीन छेद वाले फव्वारे या सूक्ष्म छिड़काव वाले संसाधन से करें।

मशीन के माध्यम से किए जाने वाले प्रतिरोपण के करीब 12 घंटे पहले सिंचाई करना बंद कर दें। करीब 18–20 दिन तक नर्सरी में पौध उगाना ज्यादा अच्छे होते हैं। हालांकि, 15 दिन पुराने अंकुरित पौधे भी रोपित किए जा सकते हैं। नर्सरी की पोषण संबंधी आवश्यकताएं मिट्टी+घरेलू खाद / वर्मी कंपोस्ट / विघटित प्रेस मड आदि से पूरी हो जाएगी। लेकिन 15 दिन पुराने अंकुरित पौधों को लगाने और तेजी से विकास करने के लिए 1.5 किलो पावडर डीएपी या 2.0 किलो 15–15–15 पावडर वाला एनपीके हर 100 वर्ग मीटर में डालें। चाकू या फिर हसिए की मदद से चटाईनुमा रोपण को 60 x 20 सेंमी के आकार में काट लें।

सामान्य तौर पर स्व–यांत्रिक धान प्रत्यारोपण यंत्र में एक बार में 8 पंक्तियां, दो तरह के अंतराल की सुविधा के साथ लगाने की व्यवस्था है। यानी 23.5 x 12 सेंमी और 23.5 x 14 सेमी. जो कि क्रमशः 35 और 30 हिल प्रति वर्ग मीटर का संधारण करता है। पौधों से पौधों की दूरी को लीवर की मदद से समायोजित किया जा सकता है। इसी प्रकार पौधों की संख्या 2–4 पौधे प्रति हिल, को भी पेंच के सहारे अंगुलिकाओं को या नर्सरी के प्लेटफार्म को सही कर समायोजित किया जा सकता है यदि अंगुली और पेंच की दूरी कम कर दी जाए तो प्रति हिल पौधों की संख्या भी बढ़ाई जा सकती है। शून्य जुताई में क्षमता ज्यादा रहती है बजाए बिना कदवा उपजाने के। और कदवा करके उपजाने में तो यह न्यूनतम होती है। यांत्रिकी प्रत्यारोपण में प्रति एकड़, एक श्रमदिवस की आवश्यकता होती है और एक स्व–यांत्रिक धान प्रत्यारोपण यंत्र एक दिन में 4 एकड़ तक प्रत्यारोपण का काम कर सकता है।

प्रयोज्यता / स्थिति

बिना कदवा किये धान–गेहूँ प्रणाली का प्रत्यारोपण

आर्थिक आंकलन

यांत्रिक बुआई में लागत ₹ 12,000 है जबकि डीएसआर में ₹ 10,000 और कदवा प्रत्यारोपित धान ₹ 20,000 प्रति हेक्टेयर।

3.5 बारिश के पानी के दक्षता पूर्वक उपयोग के लिए धान रोपाई के समय का अनुकूलन

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. डी. सिंह, यू. एस. गौतम, ए. के. सिक्का और एस. आर. सिंह।

समस्या

बिहार में सोन कमांड क्षेत्र के किसान जून के तीसरे सप्ताह से लेकर जुलाई के दूसरे सप्ताह तक धान की बुवाई करते हैं और जुलाई के तीसरे सप्ताह से अगस्त के तीसरे सप्ताह तक प्रत्यारोपण करते हैं इससे धान की परिपक्वता पर तो असर पड़ता ही है साथ ही गेहूँ की बुवाई भी समय पर नहीं हो पाती। समय पर नर्सरी बनाने और प्रत्यारोपण करने से, वर्षा के पानी के बेहतर और प्रभावी उपयोग, न्यूनतम सिंचाई की आवश्यकता और धान की पैदावार बढ़ाने में मदद मिलती है।

विवरण

- नर्सरी को 25 मई से जून के प्रथम सप्ताह तक तैयार कर लें। किसानों को सुझाव है कि 1000 वर्ग मीटर क्षेत्र में 25 किलो बढ़िया श्रेणी के धान के बीज लगाएं, जिससे कि एक हेक्टेयर में रोपने के लिए बढ़िया पौध तैयार होंगे।
- धान की नर्सरी को पहले से तैयार करने के लिए, टूयूबवेल चलाना आवश्यक होगा, जिसके लिए बिजली और डीजल की समय पर आवश्यकता होगी।
- नर्सरी को मई के अंतिम सप्ताह तक तैयार करने के लिए ट्यूबवेल पंप से अधिकतम तीन सिंचाई की आवश्यकता पड़ेगी।
- संतुलित मिश्रण तैयार करें, जिसमें 5 किलो यूरिया, 11 किलो सिंगल सुपर फास्फेट, 1.5 किलो पोटाश के लवण और 2 किलो जिंक सल्फेट मिलाकर नर्सरी बेड तैयार करें।
- 104 किलो यूरिया, 360 किलो एसएसपी, 60 किलो एमओपी और 20 किलो जिंक सल्फेट को संतुलित मिश्रण के हिसाब से तैयार करें और कदवाध्पंकिल करते समय इसका इस्तेमाल करें। बाकी 104 किलो यूरिया को दो बराबर के हिस्सों में बांटकर, आधी कल्ले निकलते समय और बाकी परागन के समय इस्तेमाल करें।
- 2–3 पौधे, प्रति हिल के हिसाब से, 15 x 20 सेंमी. लम्बी अवधि वाली प्रजाति, और 15 x 15 सेंमी. का स्थान, कम अवधि वाली प्रजातियों के पौधों के बीच रखें। यह काम जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के बीच में कर लें।

- खरपतवार को रोकने के लिए, 2.5 लीटर बूटाक्लोर (50 प्रतिशत ईसी) को 15 किलो रेत में मिलाएं और रोपण के चार से सातवें दिन के बाद, 1 हेक्टेयर धान के रोपण क्षेत्र में फैला दें।
- कीड़े, कीट जैसे तनाछेदक कीड़ों से निबटने के लिए, डाईमाक्रेन 2.5 एमएल प्रति 7.5 लीटर का इस्तेमाल करें और गंधीबग को नियंत्रित करने के लिए मलाथियन, 30 किलो प्रति हेक्टेयर के हिसाब से इस्तेमाल करें।

धान की फसल को अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवंबर के पहले सप्ताह तक काट लें, ताकि गेहूँ की फसल को उपजाने का पर्याप्त समय मिले।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

बिहार के सिंचित धान पारिस्थितिकी तंत्र।

आर्थिक आंकलन

सिंचाई का खर्च ₹ 2500 के हिसाब से बचाया जा सकता है।

3.6 बोरो धान की पौधशाला का प्रबंधन

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, के. राजन, एन. सुभाष, डी. सुब्रमण्यम और यू. एस. गौतम।

समस्या

उच्च उत्पादकता प्रजाति (एचवाईवी) धान, जो कि मध्यम अवधि समूह (125–135 दिन) का होता है, जिसे अक्टूबर–नवंबर के बीच बुआइ कर, फरवरी में रोपण जाता है उसे बोरो धान कहते हैं। बोरो धान मुख्तया पूर्वी भारत, उत्तर पूर्वी बिहार, पश्चिम बंगाल, असम और बांगलादेश में उगाया जाता है। इन क्षेत्रों में भूजल उथला है और सर्दी के मौसम में तापमान में बहुत ज्यादा फेरबदल नहीं होता। बोरो धान की पैदावार 6.0–9.0 टन प्रति हेक्टेयर होती है। हालांकि कुछ इलाकों में नर्सरी तैयार करना मुश्किल काम होता है क्योंकि काफी कम तापमान के कारण पौधशाला बड़ी संख्या में नष्ट हो जाते हैं।

नहरी कमांड का एक बड़ा हिस्सा, शीत ऋतु में जल भराव की स्थिति से जूझता है और गर्मी में यह जमीन परती रहती है। बोरो धान की नर्सरी किसी भी माध्यम से भले ही क्यों न विकसित की जाय, इसके द्वारा परती जमीन का इस्तेमाल किया जा सकता है ताकि खाद्य उत्पादकता में बढ़ोतरी हो।

विवरण

पॉलीहाउस में नवंबर से जनवरी के बीच सुरक्षित तरीके से नर्सरी तैयार की जा सकती है। इसमें यदि कम समय के लिए हो तो बांस और यदि लंबे समय के लिए (5 से 10 साल) तैयार करना हो तो लोहे का इस्तेमाल करें। पॉलीहाउस का आकार 5 X 2.5 X 1.5 मीटर उपयूक्त हैं।

पॉलीहाउस में स्वस्थ पौधे के लिए न्यूनतम मृत्यु दर के लिए 15 टन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से गोबर से तैयार खाद (एफवाईएम), बुवाई के समय नवंबर में डालें। पॉलीहाउस में मिट्टी का तापमान, जनवरी में खुले खेतों की परिस्थितियों के मुकाबले 5–6 डिग्री ज्यादा रहेगा। इसलिए यहाँ बीजों का अंकुरण बेहतर होगा। गोबर की खाद से मिट्टी का तापमान 1.5–2.0 डिग्री बढ़ जाता है, जिससे नर्सरी के विकास में मदद मिलती है।

गोबर की खाद 15 टन प्रति हेक्टेयर इस्तेमाल कर बोरो धान की नर्सरी को नवंबर के मध्य में भी खुले मैदान में बोया जा सकता है, मिट्टी को नम रखें और दो बार बहुपोषक तत्वों का अत्यधिक ठंडे मौसम में छिड़काव करें। पॉलीहाउस में उपजाई गई नर्सरी हमेशा बेहतर होती है। नर्सरी के विकसित होने के समय में कटौती करने और बीजों के नष्ट होने की दर को कम करने हेतु, बोरो धान की नर्सरी को पॉलीहाउस में जनवरी में भी उगाया जा सकता है। मध्यम समयावधि के धान (125–135 दिन) की प्रजाति जैसे

गौतम, धनलक्ष्मी, सरोज, रिछारिया, भागवती नवंबर और जनवरी, दोनों समय बुवाई के लिए उपयुक्त हैं और कम समयावधि के धान (90 से 100 दिन), जैसे प्रभात को पॉलीहाउस में जनवरी में उपजाना बेहतर होगा।

प्रयोज्यता / स्थिति

बोरो धान का उत्पादन क्षेत्र, जहाँ ठंड में काफी कम तापमान रहता है।

आर्थिक आंकलन

लोहे के पॉली–हाउस में नर्सरी तैयार करने में पहले साल में एक हेक्टेयर का खर्च ₹ 40,000 (8 पॉली–हाउस, प्रत्येक 12.5 वर्ग मीटर का) का होगा, जिसे 10 साल तक, प्रति वर्ष ₹ 4,000 के खर्च पर इस्तेमाल किया जा सकता है। बारिश के समय पॉलीहाउस का इस्तेमाल साग सब्जी उत्पादन के लिए किया जा सकता है। बांस के तैयार किए गए ढ़ांचे में खर्च घटकर ₹ 4,000 आता है, जो कि ₹ 2,000 प्रति वर्ष के खर्च पर दो साल तक इस्तेमाल किया जा सकता है।

3.7 पूर्वी प्रदेशों में एरोबिक धान का उत्पादन

संबद्ध वैज्ञानिक

संतोष कुमार, आर. एलेंचेलियन, एस. एस. सिंह एवं बी. पी. भट्ट।

समस्या

वर्षा आश्रित ऊँची भूमि और निचले वाले क्षेत्रों में पानी की गहरी समस्या भी तनाव की स्थिति पैदा करता है क्योंकि इससे धान के उत्पादन का बड़े पैमाने पर नुकसान होता है। पूर्वी भारत में 162 लाख हेक्टेयर में धान की खेती वर्षा आधारित है, जिसमें से लगभग 42 लाख भूमि सुखे से हमेशा प्रभावित रहती है और इस कारण यहाँ उत्पादन में होने वाला नुकसान लगभग 1250 करोड़ रूपए प्रति वर्ष है। परंपरागत तरीके से धान की खेती करने में बहुत ज्यादा पानी की आवश्यकता पड़ती है। एक किलो धान उत्पादन करने में लगभग 4000 से 5000 लीटर पानी की जरूरत होती है। पानी के बढ़ते संकट के कारण धान की खेती के लिए ऐसी वैकल्पिक व्यवस्था की खोज जरूरी है, जिसमें पानी की कम आवश्यकता हो।

एरोबिक धान, धान उपजाने की एक नई तकनीक है, जिसमें धान का उत्पादन करने मे कम पानी की आवश्यकता पड़ती है एवं उपज भी अच्छा होता है। इसमें धान को गैर–सिंचाई एवं गैर–कदवा वाली ऐरोबिक भूमी में लगाया जाता है एवं आवश्यकता के अनुसार पानी एवं बाहरी निवेशों को दिया जाता है। ऐरोबिक धान को सीधी बुवाई द्वारा खेत में लगाया जाता है। एरोबिक धान में सुखा सहने (ऊपरी जमीन वाली प्रजातियों का गुण) एवं अच्छा उत्पादन (निचली जमनी वाली प्रजातियों का गुण) देने की क्षमता होनी चाहिए। हालांकि ऐरोबिक धान को और अधिक सफल बनाने के लिए फिलहाल और अधिक प्रजातियां एवं उन्नत प्रजनन लाइने और प्रबंधन तकनीक खोजे जाने की आवश्यकता है। इसके अलावा भी मौजूदा जर्मप्लाज्म, पुरानी प्रजाति एवं वायुजीवी परिस्थितियों में उच्च उत्पादकता वाली प्रजातियों का पता करने और मूल्यांकन की जरूरत है ताकि ऐसी प्रजातियों का विकास किया जा सके, जो कि पानी की बढ़ती कमी के बावजूद बेहतर उपज दे सकें।

विवरण

एरोबिक धान ऐसी तकनीक है, जिसको वर्षा आधारित ऊँची और नीचले जमीनें, जहाँ अक्सर जल संकट छाया रहता है का बेहतर तरीके से इस्तेमाल किया जा सकता है। मध्यम समयकाल (110.125 दिन) की वे उन्नत प्रजनन लाइनें जो कि सीमित पानी की उपलब्धता या फिर पानी की

जबर्दस्त कमी के बावजूद बेहतर उत्पादन देने में सक्षम है, आर.सी.पी.आर. 8– आई.आर. 84899–बी. 179–16–1–1–1 (4.46 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 6–आई.आर. 77298–14–1–2–130–2 (4.32 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 17– आई.आर. 83929– बी.–बी.– 291–3–1–1 (4.15 टन/हेक्टेयर), आर.सी.पी.आर. 19– आई.आर. 84899–बी.–179–13–1–1 (3.94 टन/हेक्टेयर) एवं आर.सी.पी.आर. 18–आई.आर. 83927–बी.–बी.–278–5–1–1–1 (3.80 टन/हेक्टेयर)। ये उन्नत लाइने मौजूदा परीक्षण के आधार वाली प्रजातियों एम.ए.एस. 946 (3.17 टन/हेक्टेयर), सहभागी (2.74 टन/हेक्टेयर), एनडीआर 118 (2.51 टन/हेक्टेयर) एव आई.आर. 64 (2.5 टन/हेक्टेयर) से बेहतर प्रदर्शन कर रही हैं।

इसलिए इन उन्नत प्रजनन श्रेणियों को सीमित जल क्षेत्रों में प्रभावी तरीके से इस्तेमाल किया जा सकता है। नीचले क्षेत्रों में परंपरागत तरीके से धान उपजाने की तुलना में ऐरोबिक धान की पैदावार में 40–50 फीसदी कम पानी का इस्तेमाल होता है।

प्रयोज्यता/स्थिति

यह तकनीक वर्षा आधारित ऊँची भूमी एवं नीचली क्षेत्रों के साथ–साथ उन सिंचित क्षेत्रों में प्रभावी तरीके से लागू की जा सकती हैं, जो अक्सर जल संकट की चपेट में रहते हैं।

आर्थिक आंकलन

परंपरागत तरीके से खेती करने की तुलना में ऊपर सुझाए गए तरीके से खेती करने से ₹ 5,000–6,000 प्रति हेक्टेयर की बचत होगी।

3.8 अतिरिक्त नमी वाले क्षेत्रों में गेहूँ की सतही बुवाई

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, ए. आर. खान, उज्ज्वल कुमार, ए. अब्दुल हारिस, यू. एस. गौतम और एन. सुभाष।

समस्या

जमीन में अतिरिक्त नमी और धान की काफी देर से की जा रही कटाई (दिसंबर के अंत तक) के कारण गेहूँ एवं अन्य फसल लेने की काफी कम संभावनाएं रहती हैं। इन परिस्थितियों में गेहूँ की सतही बोवाई एक बेहतर विकल्प है। इसमें बुआई के लिए जुताई नहीं की जाती है, इसकी बोवाई तब भी की जा सकती है, जब खेत में फसल खड़ी हो, यानि धान कटने के 20–25 दिन पहले ही बोवाई की जा सकती है।

विवरण

धान की खड़ी फसल के दौरान ही गेहूँ को खेतों में अतिरिक्त नमी वाली परिस्थितियों (निचली वाली गीली जमीन) में धान के काटे जाने के (20 दिन पहले, +5 दिन) पहले फैला दिया जाता है। इस प्रक्रिया से गेहूँ को बोने में होने वाली देरी से निजात पाई जा सकती है और साथ ही जुताई की पूरी कीमत भी बचाई जा सकती है। समय पर बुवाई के कारण, परंपरागत गेहूँ की खेती की तुलना में ज्यादा पैदावार होती है। सतही गेहूँ को मिट्टी में पहले से ही उपस्थित नमी के कारण बुवाई एक माह बाद ही सीमित सिंचाई की आवश्यकता होती है। इस कारण सिंचाई के पानी में 35–40 फीसदी की बचत होती है। अधिकांशतः किसानों द्वारा नाइट्रोजन (70–80 किलो प्रति हेक्टेयर), सीमित फॉस्फोरस (0–37 किलो प्रति हेक्टेयर) की खाद इस्तेमाल की जाती है। पोटाश, 40 किलो प्रति हेक्टेयर और 35 किलोग्राम नेत्रजन का इस्तेमाल आधारी मात्रा के रूप में धान की फसल कटाई के बाद की जाती है। इसके बाद, नेत्रजन (65 किलो प्रति हेक्टेयर) को दो भागों में बांटकर, कल्ले निकलने और बाली बनने के समय डाला जाता है। इससे पैदावार में 30–40 फीसदी की बढ़ोतरी होती है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

धान–गेहूँ प्रणाली वाले अतिरिक्त नमी वाले खेत, जहाँ धान की कटाई दिसंबर में देर तक की जाती है।

आर्थिक आंकलन

प्रति हेक्टेयर पैदावार में 1 टन की बढ़ोतरी प्राप्त की जा सकती है। साथ ही जमीन तैयार करने और सिंचाई के संसाधन जुटाने के खर्च में भी बचत होती है, जिससे किसानों को आर्थिक लाभ मिलता है।

3.9 संसाधन संरक्षण तकनीक से शून्य जुताई वाला गेहूँ

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, ए. आर. खान, यू. एस. गौतम, उज्ज्वल कुमार, एन. सुभाष, ए. अब्दुल हारिस, आर. सी. भारती और ए. के. सिंह।

समस्या

भारत के पूर्वी गांगेय क्षेत्र में बसे मैदानों में धान–गेहूँ प्रणाली सबसे ज्यादा बोइ जाने वाली फसल है। लेकिन धान की देर से कटाई काफी सामान्य प्रक्रिया है। निचले वाले क्षेत्रों में किसान देर से बोवाई तो करते ही हैं, साथ ही लंबे अवधि वाली प्रजाति का इस्तेमाल करते हैं। अतिरिक्त नमी से कारण गेहूँ की फसल में और भी देर होती है।

विवरण

धान की कटाई के तत्काल बाद, शून्य जुताई वाले गेहूँ. शन्य ड्रिल तकनीक से 100 किलो प्रति हेक्टेयर, यदि समय पर है तो और 125 किलो प्रति हेक्टेयर, यदि कुछ देर हो गई है तो बोया जाए। इससे परंपरागत बोवाई की तुलना में कम से कम 15–20 दिन का अंतर पड़ता है। बोवाई की अलग अलग प्रक्रियाएं (जैसे समान लाइन, जोड़ों में लाइन या फिर नियंत्रित ट्राफिक पद्धति) उपयुक्त शून्य जुताई की पद्धति जैसे कि सामान्य जेडटी ड्रिल, डिस्क प्लांटर, बहुफसल प्लांटर और रोटरी डिस्क प्लांटर, धान के अवशेषों में 4.0 से 4.5 टन प्रति हेक्टेयर, सामान्य मानव श्रमिक की मदद से कटाई हुए खेत में इस्तेमाल की जा सकती हैं। उन खेतों, जहाँ अवशेष ज्यादा मात्रा में हैं (10 टन प्रति हेक्टेयर) वहाँ इसके लिए टर्बो हैप्पी सीडर का इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि बुवाई के पहले खेत खरपतवार से ढंका हुआ है, इन्हें हटाने के लिए ग्लायफोसाट 1 किलो प्रति हेक्टेयर का उपोग किया जाना चाहिए। गेहूँ की फसल मुख्यतः चौड़ी पत्तियों वाली और बारहमासी खरपतवार जैसे साइनोडोन डैक्टीलोन से ज्यादा प्रभावित होती है। शून्य जुताई और फसल के अवशेष बनाए रखना, हालांकि खेत में घास के पैदा होने और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार को उपजने पर प्रभावी नियंत्रण रखने में सक्षम हैं। फसल के अवशेष खेत में बनाए रखने के साथ, शून्य जुताई वाले सीधे बोए गए

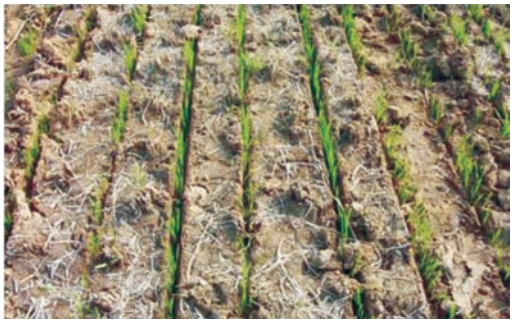

धान (जेडटीडीएसआर) के बीज के बाद शून्य जुताई वाले गेहूँ की फसल ली जाती है, यह प्रक्रिया परंपरागत गेहूँ की उपज की तुलना में 150 प्रतिशत ज्यादा उपज देती है। धान के अवशेषों के बीच, जेडटीडीएसआर के बाद बोए गए जेडटी गेहूँ के उत्पादन, जिसमें ट्रैफिक का नियंत्रण किया जाता है, दोगुना शून्य जुताई की जाती है। (जेडटी, धान और गेहूँ, दोनों में)। शून्य जुताई गेहूँ के बोवाई समय को 15–20 दिन और बढ़ा देता है साथ ही पूर्वी क्षेत्र में पड़ने वाली गर्मी के तनाव से भी मुक्त देता है। जुताई, बीज, पहली सिंचाई, खरपतवार प्रबंधन आदि में संसाधनों की बचत होती है। बढ़ी हुई उपज, खासतौर पर समय पर बोवाई, बेहतर फसल विकास के कारण होती है, और बेहतर फसल विकास, खाद को जैसा सुझाया गया है, पंक्तियों में डालने, कम खरपतवार की उपस्थिति, पहली सिंचाई के बाद कम पानी एकत्रिकरण और कड़ी गर्मी के दौरान फसलों की कटाई, कम से कम सिंचाई पर अंकुश, के कारण होती है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

धान की कटाई के बाद पर्याप्त नमी वाली जमीन पर धान–गेहूँ फसल प्रणाली।

आर्थिक आंकलन

जुताई में प्रति हेक्टेयर ₹ 2500 की बचत, 20 फीसदी बीजों में बचत, 20 फीसदी पहली सिंचाई सुविधा में बचत और प्रति हेक्टेयर पैदावार में 1 टन की बढ़ोतरी होती है, जो कि किसानों के हित में है।

3.10 सामयिक बुवाई अवस्थाओं में क्यारियों (बेड) में गेहूँ की खेती को प्रोत्साहन

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, ए. उपाध्याय, ए. आर. खान और एल. के. प्रसाद।

समस्या

सीमित जल उपलब्धता के क्षेत्र, जैसे नहर कमांड क्षेत्र का अंतिम छोर, डीजल चलित ट्यूबवेल से सिंचित किए जाने वाले खेतों में सिंचाई के लिए पानी का अभाव होता है। इसका कारण है पानी की सीमित उपलब्धता, या फिर इसकी ज्यादा कीमत। कई क्षेत्रों में मार्च में चलने वाली तेज हवाओं से समस्या होती है। इसलिए जरूरी है कि बीजों का उचित तरह से उत्पादन हो। समय पर बोए गए गेहूँ, के पौधे और उनका विकास, इस अंतर को पाटने में सक्षम हैं। इन परिस्थितियों के अनुसार, क्यारी (बेड) पर लगाया गया गेहूँ संसाधनों की बचत का बेहकर विकल्प है।

विवरण

उठी हुई बिस्तरनुमा क्यारियां (रेज्ड बेड) उन क्षेत्रों के लिए लाभदायक हैं, जहाँ भूजल का स्तर तेजी से घट रहा है या फिर जहाँ पानी की उपलब्धता सीमित है, जैसे कि नहर का अंतिम छोर। नहर के शुरुआत में भी, जहाँ ठंड के समय में जल भराव समस्या है, रेज्ड बेड अच्छी फसल लेने के लिए बेहतरीन विकल्प है। किसान स्वयं महसूस करतें हैं कि समय पर रेज्ड बेड में बोए गए गेहूँ से पानी की मात्रा में काफी बचत होती है। इसके अलावा गेहूँ के उत्पादन में तो बढ़ोतरी होती ही है। गेहूँ की पैदावार की प्रक्रिया को सीधे तरीके से लगाने के बजाए उभरे हुए कुंड प्रक्रिया के तहत बिस्तरनुमा क्यारियों में लगाने से पूरी उपज का गणित और भूमि विन्यास बदल जाता है, जिस कारण सिंचाई पर ज्यादा प्रभावी नियंत्रण होता है, जल निकास बेहतर होता है और साथ ही पोषक तत्व भी ज्यादा उपलब्ध होते हैं। कुंड सिंचित, उठे हुए बिस्तरनुमा (एफआईआरबी) सिस्टम में, पानी क्षैतिज की दिशा में यानि कुंड से बिस्तर नुमा क्यारी की ओर बहता है, और मिट्टी की सतह की ओर कोशिकाओं, वाष्पीकृत होकर पहुंचता है।

पूर्वी भारत में गंगा के किनारे बसे क्षेत्र में 67 सेंटीमीटर चौड़ाई (रेज्ड बेड की उपरी सतह –37 सेंटीमीटर, कुंड की 30 सेमटीमीटर) बेहतर है। इसमें दो क्यारी एक साथ तैयार की जाती हैं। इन्हें उचित तरह से जुताई करने के बाद ही बनाया जाता है। उठे हुए रेज्ड बेड में बेड प्लांटर की मदद से दो पंक्तियां बनाई जाती हैं। इसके लिए बेहतर श्रेणी की खेती के

तरीके अपनाए जाते हैं, जिससे परंपरागत तरीके की अपेक्षा बीज दर 30 फीसदी घट जाती है। यदि खेत सूखे हों तो, रेज्ड बेड में विकसित किए जा रहे गेहूँ को तत्काल सिंचित किए जाने की जरुरत है। दाने भरने की प्रक्रिया के दौरान सिंचाई की जाती है, जिससे पैदावार में बढ़ोतरी होती है। खरपतवार को यथोचित खरपतवार नाशक दवाओं से नियंत्रित किया जा सकता है। बिस्तरों के बीच में पैदा हुए खरपतवार को, फसल चक्र में पहले ही यांत्रिकी पद्धति से नियंत्रित किए जाने की जरुरत है। हालांकि खरपतवार का जमाव,

इस पद्धति में कम ही होता है क्योकि रेज्ड बेड के उपरी भाग सूखे रहते हैं। धान के मौसम में ध ान की दो पंक्तियां रेज्ड बेड में बिना उन्हें दूसरा आकार दिए, सीधी बोई जा सकती हैं या फिर धान की दो पंक्तियां उस खांचे में विकसित की जाती हैं। ठंड के मौसम में फिर से आकार देने वाले उपकरण की मदद से रेज्ड बेड को आकार दिया जाता है और गेहूँ की दो पंक्तियां बोई जाती हैं।

प्रयोज्यता / स्थिति

बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल में सीमित जल स्थिति के बीच समय पर गेहूँ की बोवाई, घटती भूजल स्तर या फिर नहर के हेड रिच अंतर्गत खेतों में जल भराव की स्थिति।

आर्थिक आंकलन

रेज्ड बेड बनाने और पौधे रोपने में ₹ 3600 प्रति हेक्टेयर का खर्च। लेकिन सिंचाई के पानी में 30–35 फीसदी तथा बीज दर में 30 फीसदी की बचत होती है। इसके अलावा खाद की क्षमता में भी बढ़ोतरी होती है। इसके अलावा बीज उत्पादन में भी बाजार में ज्यादा दर मिलती है। इस कारण किसान कुल मिलाकर लाभ की स्थिति में ही रहता है।

3.11 अधिक उपज की संभावनाओं वाली किस्मों का कृषक भागीदारी द्वारा मूल्यांकन

संबद्ध वैज्ञानिक

अभय कुमार, संजीव कुमार, उज्ज्वल कुमार, ए. डे, चुनचुन कुमार, ए. के. सिंह, ए. के. जैन, अदलुल इस्लाम और पी. के. ठाकुर।

समस्या

किसानों के खेतों में अधिक उत्पादकता वाली प्रजातियों की संविक्षा ताकि कृषि उत्पादन बढ़ाया जा सके, खासतौर पर जहाँ धान–गेहूँ फसल प्रणाली अपनाई जाती है।

विवरण

बिहार के वैशाली में बसा है चक्रमदास गांव, जहाँ धान, गेहूँ, मक्का, आलू, सरसों और मूंग की कई विकसित प्रजातियों का प्रयोग किया गया। इस गांव में किए गए प्रयोग से न केवल उत्पादन बल्कि इसके साथ ही आर्थिक लाभ भी बढ़ा है। इसके अलावा फसल संबंधि विकसित प्रक्रियाएं भी अपनाई गई हैं, जैसे लाइन में बोवाई, शून्य जुताई, लेसर की मदद से सतह का समतलीकरण, रोटावेटर का इस्तेमाल, द्वितीय और तृतीय फसल, जल प्रबंधन, खाद का बेहतर उपयोग और पौधों की सुरक्षा के उपाय शामिल हैं। इन प्रक्रियाओं को 88 हेक्टेयर क्षेत्र में अपनाया गया, जिसमें 359 किसान शामिल थे। कुल मिलाकर 42 विकसित प्रजातियों का परीक्षण किया गया और इनमें सबसे बेहतरीन प्रजातियां निम्नानुसार पाई गईं।

धान– राजेंद्र श्वेता, पूसा 44 और पीएनआर–381

गेहूँ– पीबीडब्ल्यू–343, पीबीडब्ल्यू–373 और एचडी–2722

मक्का– शक्तिमान–4 (क्यूपीएम मक्का), देवकी और लक्ष्मी

आलू– कुफरी पुखराज, कुफरी कंचन और चिपसोना–1

रेपसीड और सरसों– पूसा तारक, पूसा महक, अंकुर (पीली सरसों)

मूंग– पंत मूंग–1, एचयूएम–16, पूसा विशाल

कुल पैदावार में 50–80 फीसदी की बढ़ोतरी हुई, जबकि अंगीकार करने की दर 70 फीसदी रही।

प्रयोज्यता / स्थिति

पूर्वी भारत के सिंचित निचली जमीन या फिर मध्य ऊँचाई वाली जमीन।

आर्थिक आंकलन

उच्च उत्पादकता वाली प्रजातियों से धान के समानुपाती पैदावार (आरईवाई) 110 क्विंटल प्रति हेक्टेयर रहा, जबकि परंपरागत प्रजातियों से यह पैदावार 57 क्विंटल प्रति हेक्टेयर थी। इसके अलावा 70 मानवश्रम दिवस का अतिरिक्त सृजन हुआ जिससे रोजगार के अवसर उत्पन्न हुए।

3.12 ढैंचा (सेस्बानिया) के माध्यम से भूरे रंग की खाद

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. आर. खान, एस. एस. सिंह, ए. अब्दुल हारिस, उज्ज्वल कुमार और एन. सुभाष।

समस्या

गोबर की खाद या फिर कंपोस्ट की सीमित उपलब्धि और हरी खाद के लिए गेहूं कटाई के बाद काफी कम समय के कारण धान–गेहूँ प्रणाली में जैविक पदार्थों की घटती मात्रा चिंता का विषय। लवणीय मिट्टी में तो समस्या और भी गंभीर।

विवरण

सेस्बानिया (ढैंचा) को हरी खाद के रूप में सीधे बुवाई या फिर प्रतिरोपित धान की फसल में इस्तेमाल किया जाता रहा है। भूरी खाद अभ्यास के लिए सेसबानिया रोस्ट्राटा बीज, 20 कलो प्रति हेक्टेयर की दर से धान की सीधे बोवाई या फिर प्रतिरोपण के साथ या फिर दो दिन के अंदर की जाती है और सेस्बानिया फसल को 25–30 दिन के मध्य 2–4–डी इथायल ईस्टर, 800 जीएआई प्रति हेक्टेयर की दर से डालकर खत्म कर दिया जाता है। सेस्बानिया की सूखी पत्तियां तेजी से विघटित होकर नेत्रजन और दूसरे पुनर्चक्रित पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं। यह मृदा जैविक कार्बन भी बढ़ाने में मदद करता है। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार भी, धान के उप्तादन पर विपरीत असर डाले बिना, आधे खत्म हो जाते हैं। भूरी खाद के कारण, कीटों के हमलों की संख्या भी कम ही रहती है। सेस्बानिया रोस्ट्राटा तेजी से बढ़ता है और यह नम परिस्थितियों में भी आराम से अपना काम करता है। यह मृदा की सभी परिस्थितियों के अनुकूल हो जाता है और सूखे और जल भराव की स्थिति को टालता है। भूरे खाद का प्रभाव सोडियम बहुल जमीन पर ज्यादा होता है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

पहले 15 दिन बिना पानी में डूबे हुए सीधी बोवाई या फिर प्रतिरोपित धान, जिससे अंकुरण

और पौधों के विकास में मदद मिले।

आर्थिक आंकलन

प्रति हेक्टेयर कुल कीमत ₹ 500। इस प्रक्रिया से 30–35 किलो नेत्रजन प्रति हेक्टेयर मिलता है, जो कि रसायनिक खाद की बचत है। साथ ही जैविक पदार्थ भी मृदा में मिलाता है, जिससे यह ज्यादा समय तक सक्रिय रहती है।

3.13 मसूर, चना और गर्मी के समय मूंग की खेती में शून्य जुताई की स्वीकार्यता को प्रोत्साहन

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. एस. सिंह, ए. आर. खान, यू. एस. गौतम, उज्ज्वल कुमार, एस. के. सिंह और आर. सी. भारती।

समस्या

मसूर और चना में, अतिरिक्त बीज दर और जुताई का समय, खासकर टाल क्षेत्र में, लागत बढ़ाता है और साथ ही उत्पादकता में भी कमी आती है।

विवरण

मसूर और चना महत्वपूर्ण रबी की फसलें हैं। और रबी की फसलों के बाद मूंग की फसल गरमा फसल के रूप में ली जा सकती है। ये फसलें शून्य जुताई प्रक्रिया से ड्रील मशीन या फिर बहु–फसली प्लांटर की मदद से ली जाती हैं। फसलों की उत्पादकता ज्यादा होती है। मसूर का बीज दर 130–140 से घटकर 35 किलो प्रति और चने की फसल में 150 से घटकर 80 किलो प्रति हेक्टेयर पर आ जाती है।

प्रयोज्यता / स्थिति

मसूर और चने के लिए टाल क्षेत्र। धान आधारित क्षेत्र, जहाँ मसूर और चने की फसलें भी ली जाती हैं, गर्मी में सरसों और गेहूँ की कटाई के बाद मूंग क्षेत्र और नीची जमीन, जहाँ मिली जुली फसलें ली जाती है।

आर्थिक आंकलन

मसूर और चने में बीजों की बचत 80–100 किलो प्रति हेक्टेयर। इसके अलावा जुताई की कीमतों में भी बचत ₹ 2500 प्रति हेक्टेयर की दर से होती है।

3.14 सिंचित पर्यावरण प्रणालियों में विविध धान आधारित फसल प्रणाली की स्थिरता, उत्पादकता और लाभप्रदता

संबद्ध वैज्ञानिक

आर. डी. सिंह, शिवानी, एन. चंद्रा और एस. के. सिंह।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में तेजी से बढ़ती जनसंख्या के मद्देनजर बढ़ती हुई खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए निहायत ही जरूरी हो गया है कि फसलों की पैदावार बढ़ाई जाए। यानि प्रति इकाई क्षेत्र और समय में फसल प्रणाली का विकास किया जाए क्योंकि पैदावार बढ़ाने के लिए अब क्षेत्रफल बढ़ने की कोई गुंजाइश नहीं है।

विवरण

धान आधारित 10 फसल प्रणालियों का प्रबंधकीय अभ्यास का मूल्यांकन किया गया। ये प्रणाली हैं धान – गेहूँ – उर्द, धान – शिमला मिर्च – खीरा, धान – गाजर – लोबिया, धान – सरसों – टमाटर, धान – आलू – प्याज, धान – गोभी – फ्रेंच सेम, धान – धनिया भिंडी, धान – टमाटर – लौकी, धान – मटर – हरी मिर्च और धान – दाल – तोरई।

धान का प्रत्यारोपण जुलाई के पहले सप्ताह में किया जाना चाहए। मध्यम समयावधि के धान की प्रजाति को उपजाना लाभदायक होता है, जिससे रबी की फसल को समय पर बोया जा सकता है।

रबी की फसले, जिसमें टमाटर, आलू, सरसों, पालक और पत्ता गोभी शामिल हैं ग्रीष्मकालीन फसलों की बेहतरी के लिए अक्टूबर–नवंबर में बुआई करनी चाहिए।

ग्रीष्मकालीन फसल (लौकी, लोबिया, प्याज, तोरई और भिंडी) को फरवरी या फिर मार्च के पहले सप्ताह में बुआई करनी चाहिए, जिससे अधिकतम पैदावार हो सके।

कुल 10 विविध फसलों पर 4 साल तक निरंतर किए गए प्रयोग के बाद पाया गया कि पांच फसल प्रणालियां जैसे धान–टमाटर–लौकी के अलावा धान–धनिया–भिंडी, धान–सरसों–टमाटर, धान–गाजर–लोबिया, धान–आलू–प्याज आर्थिक लाभ की दृष्टि से लाभप्रद साबित हो सकती हैं।

प्रयोज्यता / स्थिति

पूर्वी क्षेत्र की सिंचित पर्यावरण प्रणाली

अर्थ शास्त्र / लाभ

सबसे ज्यादा लाभ (₹ 1,59,904 प्रति हेक्टेयर) धान–टमाटर–लौकी की खेती में पाया गया, इसके अलावा धान–धनिया–भिंडी की फसल में ₹ 98,683 और धान–सरसों–टमाटर की खेती में प्रति हेक्टेयर ₹ 88,976 का लाभ पाया गया।

3.15 बहु–जल उपयोग प्रणाली के तहत फसलों के अनुक्रम की जल उत्पादकता

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. अब्दुल हारिस।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र की सिंचित परिस्थिति प्रणाली में कम फसल–जल उत्पादकता।

विवरण

बिहार की तीन मुख्य फसलें अनुक्रम हैं, धान–गेहूँ–मूंग, धान–आलू–प्याज और धान–गोभी–लोबिया की सहायक जलाशय बहु–उद्देशीय जल उपयोगिता प्रणाली और ट्यूबवेल सिंचाई के अंतर्गत जल उत्पादकता की तुलना की गई। धान (एमटीयू–7029 प्रजाति) को जून के पहले सप्ताह में प्रतिरोपण किया गया और कटाई नवंबर के पहले सप्ताह में की गई। रबी की पसल के अंतर्गत गेहूँ (एचडी 2733), आलू (कुफरी अशोका) और गोभी (सावित्री) का रोपण नवंबर के पहले सप्ताह में किया गया। आलू और गोभी फरवरी के पहले सप्ताह में काट ली गईं, जबकि गेहूँ की कटाई अप्रैल के पहले सप्ताह में की गई। ग्रीष्मकालीन फसलें लोबिया (पीएस–2) और प्याज (पटना लाल) को मार्च के दूसरे सप्ताह में बोया गया, और मूंग (के 9531) को अप्रैल के दूसरे सप्ताह में रोपा गया। इन सभी फसलों में इस्तेमाल किए गए पानी की गणना की गई और इसमें सिंचाई के लिए इस्तेमाल पानी के अलावा वर्षा से उपलब्ध जल की मात्रा भी शामिल की गई।

सहायक जलाशय बहु–उद्देशीय जल उपयोगिता प्रणाली और ट्यूबवेल सिंचाई के अंतर्गत विभिन्न फसलों के लिए फसल–जल उत्पादकता का आंकलन किया गया, जिससे पता चला कि धान–गोभी–लोबिया के अनुक्रम ने सर्वाधिक जल उत्पादकता कीमत 1.58–1.79 किलोग्राम प्रति घन मीटर हासिल की है, जो कि निश्चित ही धान–आलू–प्याज (1.37–1.73 किलोग्राम प्रति घन मीटर)

और धान–गेहूँ–हरा मूंग (0.81–1.21 किलोग्राम प्रति घन मीटर) से कहीं बेहतर थी। जल उत्पादकता शुद्ध लाभ के मान से भी धान–गोभी–लोबिया के अनुक्रम में 13.30 रुपए प्रति घन मीटर पायी गई, जो कि निश्चित ही धान–आलू–प्याज अनुक्रम (10.11 रुपए प्रति घन मीटर) से बेहतर था।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

सिंचित मध्य भूमि और नीची की भूमि वाली मध्य गंगा के मैदानों में लागू।

आर्थिक आंकलन

धान–गोभी–लोबिया अनुक्रम में 17.81 प्रति घन मीटर निश्चित ही दूसरे अनुक्रमों से काफी बेहतर दिखाई दिया। यदि आर्थिक लाभ की बात करें तो इस अनुक्रम में ₹ 13.30 प्रति घन मीटर दर्ज किया, जो कि दूसरे अनुक्रमों से काफी बेहतर था।

3.16 पहाड़ी भू भागों पर फलों के बगीचे लगाने के लिए कम लागत वाली वर्षा जल संचयन संरचना (डोबा) का विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

पी. आर. भटनागर, पी. डे. और संतोष माली।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र के पठारी क्षेत्र में सिंचाई के लिए पानी की अनुपलब्धता, यहाँ फलों के पेड़ लगाने में सबसे बड़ी बाधा है। उतार चढ़ाव वाली भौगोलिक स्थिति और मिट्टी की कम जल धारण क्षमता के कारण वर्षा के पानी का भंडारण मुश्किल है।

विवरण

पूर्वी क्षेत्र के पठार और पहाड़ी क्षेत्रों में सालाना बारिश का आंकड़ा करीब 1200 से 1400 मिली मीटर है। हालांकि भू जल के पुनर्भरण की तकनीक उपलब्ध है, लेकिन नमी प्रचुरता ऊपर के 30–45 सेंटीमीटर गहराई में जरूरी है, ताकि नए लगाए गए फलों के पौधे सुरक्षित बच सकें। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए कम कीमत वाली जल भंडारण संरचना (डोबा) का मानकीकरण किया गया ताकि पहाड़ी क्षेत्र की परिस्थिति में बारिश के मौसम में इधर उधर बहने वाले पानी का भंडारण किया जा सके।

इस तकनीक के तहत उपरी सतह पर बनी जमीन पर 3.0 X 1.5 X 1.0 मी. आकार का एक गड्ढा खोदा जाता है। इसके बाद, इसमें स्टेबलाईजड यूवी-काली 250 माइक्रो मोटाई की पॉलीथीन बिछा दी जाती है। डोबा में बारिश के दिनों में जल संग्रहण के बाद, इस खाई को स्थानीय सामान से बने छप्पर से ढ़ंक देना होगा। यह आंकलन लगाया गया है कि एक डोबा में इतना पानी जमा हो जाता है कि इससे 10 नए रोपे गए पौधों की सिंचाई के माध्यम से जीवन रक्षा हो जाती है। इस ढांचे की उम्र दो साल है। इस डोबा का इस्तेमाल मौसमी जल-धाराओं से पानी भरने में भी किया जा सकता है ताकि फलों के पौधे सुरक्षित तरीके से रोपे जा सकें।

प्रयोज्यता / स्थिति

यह तकनीक पूर्वी पठार और पहाड़ी वाले, वर्षा आधारित ऊपरी भूभाग में इस्तेमाल की जा सकती है।

आर्थिक आंकलन

एक डोबा के निर्माण में करीब-करीब ₹ 1000 से लेकर ₹ 1100 तक का खर्च आता है और हर डोबा में करीब 5000 लीटर पानी संरक्षित किया जा सकता है।

3.17 धान-गेहूँ पारिस्थितिक तंत्र में कृंतक (चूहा) प्रबंधन

संबद्ध वैज्ञानिक

मोहम्मद इदरीस।

समस्या

धान, गेहूँ, दालें, आलू और गन्ने की फसलों को खेतों में सक्रिय चूहा से खतरा होता है। 2011 में चूहों से अधिक नुकसान मक्के की फसल को बिहार के 6 जिलों में पाया गया था, वे जिले हैं पूर्णिया, अररिया किशनगंज, मधेपुरा और कटिहार। चूहा गन्ने की फसल तक ही सीमित नहीं रहते बल्कि उसके बाद खरीफ में धान और रबी में गेहूँ की फसल पर हमला बोलते हैं और इन फसलों के कटने के बाद, वे वापस गन्ने की फसल पर आक्रमण करते हैं। साग सब्जियों में सर्वाधिक बैंगन की फसल में 800 से ज्यादा सक्रिय बिल पाए गए, जबकि फूल गोभी की फसल के दौरान 500–600 सक्रिय बिल पाए गए।

विवरण

चूहो में भारी अनुकूलन शक्ति होती है और इसी कारण, किसी भी एक तकनीक से ये नियंत्रण में नहीं लाए जा सकते। इन कृन्तकों को काबू में पाने के लिए एकीकृत विष प्रबंधन तकनीक, जो कि पर्यावरण जीव विज्ञान और कीट प्रजातियों के आचार विज्ञान पर आधारित हो, साथ ही जनसंख्या नियंत्रण तकनीक का भी इस्तेमाल किया जाना ही इन्हें नियंत्रित करने का उपाय है। लेकिन ये सभी कदम आर्थिक रूप से व्यवहार्य हों और सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप हों, तभी इन हानिकारक जंतुओं से मुक्ति पाई जा सकती है। दो विकल्प, घातक और गैर-घातक उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग इन जंतुओं की जनसंख्या को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है। घातक विकल्प, समस्या से तत्काल राहत प्रदान करता है और यह न केवल प्रभावी बल्कि इन जंतुओं को नियंत्रित करने में व्यवहारिक और आर्थिक दृष्टि से भी अनुकूल माना जाता है।

I. गैर घातक तकनीक

अ) कर्षण प्रक्रिया

- गहरी जुताई कर बिलों को नष्ट करना।
- मेड़ का छोटा आकार
- खेत के आसपास खरपतवार और कचरा हटाना
- गैर प्राथमिकता वाली फसलें, जैसे कि अरण्डी की फसल को फसल पट्टी (10 मी.) के रूप में पैदा करना।

ब) यांत्रिकी उपाय

पिंजरे में कैद करना पुरानी प्रथा है। स्थानीय तौर पर बने हुए पिंजरों की मदद से इन चूहो को कैद किया जा सकता है। यह प्रभावी भी है, मूस मार दवाएं डालने के बाद बचे हुए चूहो को कैद कर लिया जाए। पिंजरे में कैद करना रात में सक्रिय होने वाले चूहे जैसे कि छोटी घूंस, नरम रायें वाला चूहा और क्षेत्रीय चूहिय के मामलों में काफी सफल प्रक्रिया है। मूलतः दो मुख्य प्रकार से इनसे राहत पाई जा सकती है यानी या तो इनकी जान ले ली जाए या फिर जीवित ही पकड़ा जाए।

स) जैविक प्रक्रिया

इन कृन्तकों के दुश्मन जीवों को पालकर खेतों में छोड़ देना भी एक बेहतर विकल्प हो सकता है। इनके प्राकृतिक शत्रुओं में बिल्ली, सियार, नेवला, लोमड़ी, उल्लू, पतंगे, गोह और सांप प्रमुख हैं।

खेत में पक्षी आश्रय के रूप में रखें, जिनके कारण शिकारी पक्षी खेतों में आएं और कृन्तकों का नाश करें।

II. *घातक तकनीक*

इन्हें कृन्तक नाशी रसायनों की मदद से नियंत्रित किया जाता है। मूस मार का यह उपयोग सबसे ज्यादा प्रचलित लाभदायक और आसान तरीका है, जो कि भारतीय उप महाद्वीप में कृन्तकों के नियंत्रण के लिए किसानों द्वारा अपनाया जाता है। खेतों में इनकी कई प्रजातियां, मिली जुली जनसंख्या पाई जाती है और इसी कारण मूस मार इन्हें व्यापक तरीके से नियंत्रित करने का प्रभावी उपाय है। इन कृन्तकों को मुख्यतः तीन भागो में बांटा जा सकता है, तीव्र, थक्कारोधी और धुमकारक। नीचे दिए गए उपायों से कृन्तकों की समस्या पर काफी हद तक लगाम लगाई जा सकती है।

अ) तीखा जहर

जिंक फॉस्फाइड सबसे ज्यादा इस्तेमाल किया जाने वाला तीखा जहर है। सक्रिय और हाल ही में खोदे गए कृन्तकों के बिलों की खोज करें। इन्हें फंसाने के लिए दो दिन तक सादा चारा डाला जाए, ताकि नई वस्तु खाने में उन्हें भय न लगे। इस भोजन के रूप में 960 ग्राम टूटा हुआ अनाज 20 ग्राम जिंक फॉस्फाइड और 20 ग्राम खाने का वनस्पति तेल 10 ग्राम प्रति बिल के हिसाब से बिलों में गहराई से डाल दें। इस प्रक्रिया में सफलता का प्रतिशत करीब करीब 60 है।

ब) थक्कारोधी

जिंक फॉस्फाइड ऑपरेशन के 8-10 दिन बाद, ब्रोमेडिओलोन (0.005 प्रतिशत), जोकि तैयार चुग्गा है या फिर मोम की टिकियाओं को ताजे खुदे बिलों में 10 ग्राम प्रति बिल के हिसाब से डाल दें। यह खेतों में कृन्तकों की बची हुई जनसंख्या के नियंत्रण के लिए आवश्यक है।

ब्रोमेडिओलोन बेट कांसंट्रेट (बीसी) यानि ललचाने वाली वस्तु के रूप में भी उपलब्ध है। जहरीली ललचाने वाला भोजन तैयार करने के लिए अनाज में तेल डालें, जैसा कि ललचाने वाला भोजन तैयार करने के पहले किया जाता है, जो कि उपर भी बताया गया है। फिर इसमें 20 ग्राम ब्रोमाडियोलोन

डालकर इसे किसी लकड़ी की मदद से हिलाकर मिला दें। इसे तब तक मिलाएं, जब तक कि यह एक समान, यानि सम्मिश्रण नहीं हो जाए। इस मिश्रण में 960 ग्राम टूटा हुआ अनाज, 20 ग्राम खाने का तेल और 20 ग्राम ब्रोमेडिओलोन मिला रहेगा। इस प्रक्रिया में कृन्तकों को आकर्षित करने के लिए,पहले कुछ रखना आवश्यक नहीं है। यह मिश्रण एक धीमा जहर है और इस कारण कृन्तक 4 से 5 दिन के अंतराल में मरने लगते हैं। एक बार इसे अनाज के साथ डालने से करीब 60–80 फीसदी कृन्तक मारे जाते हैं। यह उन पशुओं, जीवों के लिए सुरक्षित है, जो फसलों को नुकसान नहीं पहुंचाते।

स) धुम्रकारक

इस प्रबंधन तकनीक में जिंक फॉस्फाइड के इस्तेमाल के बाद धुम्रकारक का सुझाव दिया गया है, जिससे कि बचे हुए कृन्तकों से भी पीछा छुड़ाया जा सके। लेकिन उच्च विषाक्तता और मारक क्षमता के कारण, इसे किसी पौधों की सुरक्षा के कार्य में लगे किसी अनुभवी व्यक्ति को ही करना चाहिए। इसे आम जनता में इस्तेमाल पर भी प्रतिबंध होना चाहिए। यह प्रक्रिया तभी सुझाई जाती है, जब कृन्तकों का आतंक काफी बढ़ गया हो और दूसरे सभी उपयोग प्रभावी साबित न हो रहे हों।

नियंत्रण ऑपरेशन कब किया जाए?

क्षेत्र के कृन्तकों की जनसंख्या, प्रजनन चक्र और नियंत्रण पर किए गए अध्ययन से पता चलता है कि इन पर नियंत्रण के लिए अभियान फसलों को बोए जाने या पौधे लगाए जाने के पहले किया जाना चाहिए। इन कृन्तकों की भोजन संबंधी आदतों के अध्ययन से साफ है कि वे ललचाने वाला भोजन सर्वाधिक गर्मी के मौसम में ही आसानी से खाते हैं क्योंकि तब नैसर्गिक तौर पर उन्हें खेतों में भोजन उपलब्ध नहीं रहता।

नियंत्रण के लिए ऑपरेशन समय चक्र

कृन्तक प्रबंधन का अध्ययन करने के बाद निम्न कैलेंडर पालन करने का सुझाव दिया गया है।

पहले दिन– जीवित बिलों की पहचान कर उन्हें बंद करने / घूस के बिलों को खोलने और सामान का आंकलन कि कितना चारा उन्हें ललचाने में लगेगा और कितना जहर उपयुक्त होगा।

दूसरा दिन– हर सक्रिय बिल पर 20 ग्राम के हिसाब से चारा डाला जाए।

चौथा दिन– जह कृन्तकों का प्रकोप ज्यादा हो तो (50 बिल प्रति हेक्टेयर) तो जिंक फॉस्फाइड के इस्तेमाल की मात्रा 10 ग्राम प्रति बिल रखें इसे कागज में लपेट कर बिल के अंदर डाल दें। यदि प्रकोप कम (25 बिल प्रति हेक्टेयर) या फिर मध्यम (यानी 25 से ज्यादा बिल प्रति हेक्टेयर) है तो ब्रोमेडिओलोन का इस्तेमाल करें।

पांचवां दिन– मरे हुए कृन्तकों को एकत्रित करें और उन्हें दफना दें।

सातवां दिन– खुले बिलों को बंद करें / बंद बिलों को खोल दें।

आठवां दिन– बचे हुए जीवित कृन्तकों के लिए ब्रोमेडियोलोन का इस्तेमाल करें। ब्रोमेडियोलोन मोम का एक टुकड़ा, जो कि 16.5 ग्राम का होता है, या फिर 15-20 अलग अलग ललचाने वाली वस्तु, जिनमें 0.005 प्रतिशत बीसी मिला हुआ हो, या फिर अल्यूमिनियम फॉस्फाइड की गोलियां, यदि उपलब्ध हैं तो उन्हें समस्या ग्रस्त क्षेत्र में रख दें।ये सभी किसी विशेषज्ञ की निगरानी मे किया जाना उचित है।

दस दिन के बाद, पूरी तरह से नियंत्रण पाने के लिए सभी बिलों को बंद कर दें।

प्रयोज्यता / स्थिति

उन सभी खेतों में उपयुक्त है जहाँ चूहे फसलों को नुकसान पहुंचा रहे हैं और आतंक मचा रखा है।

आर्थिक आंकलन

यह खेत की परिस्थिति और जिस प्रजाति के चूहो का हमला है, के ऊपर निर्भर करता है। नीचे दी गई सारणी में समस्या की गंभीरता को देखते हुए संभावित खर्च की स्थिति दिखाई गई है।

समस्या का स्तर (बिल प्रति हेक्टेयर)	प्रबंधन कीमत (₹ प्रति हेक्टेयर)
कम (25 से कम बिल)	40–100
मध्यम (26–50 बिल)	75–200
गंभीर (50 से ज्यादा बिल)	200–500

3.18 अनुत्पादक आम के बगीचों का कायाकल्प

संबद्ध वैज्ञानिक

बिकाश दास, विशाल नाथ और मथुरा रॉय।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में पुराने और अनुत्पादक आम के बगीचों की बहुतायत से आम के उत्पादन में कमी आ रही है।

विवरण

बूढ़े और पुराने हो चले आम के पेड़ों की लंबी बिना उत्पादकता वाली शाखाएं हैं। पेड़ के छत्र (कैनोपी) के अंदरुनी हिस्से इन शाखाओं से लदे रहते हैं, जिस कारण सूर्य की रोशनी इन तक नहीं पहुंचती। इन्हीं कारण ये शाखाएं सूर्य की रोशनी के लिए संघर्ष करती हैं और फल केवल बाहरी सतह में ही लगते हैं। इन परिस्थितियों में किसान के पास और कोई विकल्प नहीं होता सिवाए इसके कि वह पूरे पेड़ों को हटा दे और नए सिरे से बाग को विकसित करे। लेकिन नए सिरे से बाग को विकसित करने में 6 से 7 साल के करीब समय लगता है। दूसरी ओर पुनर्जीवन देने वाली इस तकनीक के माध्यम से किसान इन बागों की उत्पादकता तीन साल के समय के अंदर ही बढ़ा सकता है। यानि यह अनुत्पादक आमों के बगीचों के लिए एक बेहतर विकल्प है।

पुराने और बूढ़े हो चले पेड़ों को पुनर्जीवित करने के लिए इन प्रक्रियाओं का पालन करें :

- पहला कदम-अनुत्पादक शाखाओं का पता लगाना, उन पर निशान बनाना और फिर उन्हें छांटना / पूरी तरह से काट देना (खासकर तृतियक शाखाएं)। दिसंबर का महीने इसके लिए उपयुक्त है। इसके बाद, काटी गई शाखाएं और लकड़ियां, मूल पौधे या फिर पेड़ के पास से भी हटा दें।
- काटे गए स्थान पर दवा लगाकर, संक्रमण को रोकें और फिर इस पर रंग भी लगाएं, ताकि लेटेक्स के निकलने को रोका जा सके।
- तने के क्षेत्र में गोला बना दें।
- इसके बाद 10-12 की संख्या में अंकुरण, जो कि सही दिशा में उपज रहे हों, को चुन लें

और बाकी सभी, जिनका चयन न किया गया हो, हटा दें। बाद में भी जब भी अचयनित अंकुरण उपजें, उन्हें लगातार हटाते रहें। बाद के समय में प्रति शाखा 4-5 टहनियों की सुरक्षा करें।

- चयनित टहनियों का प्रबंधन करें और ध्यान रखें, ताकि वे छाता रुपी वृक्ष में तब्दील हो।
- यदि पेड़ के फल उत्कृष्ट गुणवत्ता के नहीं हैं तो बेहतर गुणवत्ता वाले फलों की टहनियों के ग्राफ्टिंग की जा सकती है। यह ग्राफ्टिंग चयनित किए गए अंकुरण के स्थान पर किया जाना बेहतर होगा।
- तना छिद्रक कीटों पर भी नियंत्रण रखें और जब भी वे दिखाई दें, उनका इलाज करें।
- इसमें खाद का भी उपोग करें। इसमें 800 : 300 : 1000 ग्राम के अनुपात में एनकेपी+50 किलो ग्राम एफवाईएम, प्रति पेड़ के हिसाब से इस्तेमाल करें।
- समय समय पर अंतर-फसलें उगाते रहें।

इन कदमों के उठाने के बाद, ये पेड़ तीन सालों में फल देने की स्थिति में आ जाएंगे। इन पेड़ों से अधिकतम उत्पादकता 6 साल बाद होगा। जबकि यदि नए पौधे लगाए गए हैं तो, अधिकतम पैदावार 15 साल बाद ही मिल सकेगी।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

पूरे पूर्वी प्रदेशों में इसे लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

बूढ़े और पुराने अनुत्पादक पेड़ों को पुनर्जीवित करने की इस प्रक्रिया में तीन साल में प्रति पेड़ ₹ 1500 का खर्च आएगा। लेकिन इस प्रक्रिया के 6 साल बाद, 75-80 किलो आम प्रति पेड़ उत्पादन होगा। कुल मिला कर किसान लाभ में ही रहेगा।

3.19 उच्च घनत्व वाले आम के बगीचों का विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

मथुरा रॉय, विशाल नाथ और बिकाश दास।

समस्या

पूर्वी पठारों और पहाड़ बहुल क्षेत्रों में परंपरागत आम के बगीचों में कम उत्पादकता (5-6 टन प्रति हेक्टेयर) मुख्य समस्या है।

विवरण

- इस प्रक्रिया के अंतर्गत आम के पौधों, आम्रपाली प्रभेद का रोपण करना है। इन पौधों को 2.5 x 2.5 मीटर के अंतर में लगाए जाते हैं। इस हिसाब से यहाँ 1600 पेड़ प्रति हेक्टेयर लगाए जा सकते हैं। जबकि परंपरागत तरीके से पौधे लगाने में केवल 100 पौधे ही इतने स्थान में लगाए जा सकते थे।
- पानी के बेहतर इस्तेमाल के लिए टपक (ड्रिप) प्रणाली का इस्तेमाल करें। इससे सिंचाई के काम में लगने वाले मजदूरों की संख्या में भी कमी आएगी
- पौधों की बेहतर उपज के लिए भी ध्यान रखना होगा। किसान खासतौर पर देखें कि कोई भी शाखा 60 सेंटीमीटर से ज्यादा न बढ़े। दूसरे साल, मचान पर विकसित चार शाखाओं को 60 सेंटीमीटर से ज्यादा बढ़ने दिया जाए। तीसरे साल तीन द्वितीयक शाखाओं को 45 सेंटीमीटर की लंबाई पर, प्राथमिक शाखा से विकसित होने दिया जाए।
- फल दे रही शाखाओं की फल देने के बाद लगातार कटाई–छंटाई करनी चाहिए। इन्हें पैदा होने वाले स्थान से 5 सेंटीमीटर तक छांट दिया जाए।
- हर चार साल बाद, फल देने वाले पेड़ों की भी जबर्दस्त छंटाई की जाना चाहिए, जिससे कि डालों की अधिक्यता से बचा जा सकता है।

- इन उच्च घनत्व वाले फलों के बगीचों से 16-20 टन प्रति हेक्टेयर का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

स्थान / परिस्थिति

यह तकनीक पूर्वी पठारों और हिली क्षेत्रों के लिए काफी बेहतर है।

आर्थिक आंकलन

एक हेक्टेयर उच्च घनत्व वाले आम के बगीचे की स्थापना में ₹ 2.98 लाख का खर्च आता है। कुल 10 साल की समयावधि में खर्च का आंकलन करीब ₹ 6.97 लाख आंका गया है। लेकिन 10 साल की अवधि में कुल आय ₹ 13.0 लाख की होगी और 10 साल के बाद, एक हेक्टेयर उच्च घनत्व वाले आम के बगीचे से शुद्ध लाभ ₹ 2.00 लाख प्रति साल लिया जा सकेगा।

3.20 अति उच्च घनत्व वाले अमरुद के बगीचों का विकास

संबद्ध वैज्ञानिक

बिकाश दास, संतोष माली।

समस्या

पूर्वी भारत के पठार वाले क्षेत्र में स्थित अमरुद के परंपरागत बागों में उत्पादकता काफी कम। इन बागों में 400 पेड़ प्रति हेक्टेयर विकसित किए जाते हैं।

समस्या

- अमरूद के पेड़ 1 x 2 मीटर की दूरी में रोपे जाते हैं और इस तरह प्रति हेक्टेयर में 5000 पेड़ रोपे जा सकते हैं।
- रोपण के लिए इलाहाबाद सफेदा या फिर सरदार प्रजातियों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। लेकिन यह ध्यान भी रहे कि रोपित की जाने वाली सामग्री विश्वसनीय सूत्र से ही ली जाएं।
- पौधे को गिरने से बचने के लिए अंग्रेजी की वर्णमाला के अक्षर एच के आकार की खूंटी का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- बारिश के मौसम के बाद जड़ों को घास या फिर सूखी घास फूस से ढ़ंकना लाभ दायक है क्योंकि इससे नमी जड़ों के क्षेत्र में बरकरार रहेगी। लेकिन ढ़ंकने वाली सामग्री पर कीटों के हमले से बचाने के लिए कीट नाशक, पौधारोपण के पहले साल, कम से कम 6 बार इस्तेमाल करें।
- पानी के बेहतर इस्तेमाल के लिए टपक (ड्रिप) प्रणाली का इस्तेमाल करें। इससे सिंचाई के काम में लगने वाले मजदूरों की संख्या में भी कमी आएगी।
- पौधों की ट्रेनिंग के लिए सावधानी बरती जाना आवश्क है। यहाँ जरूरी है कि किसी भी शाखा को 30-40 सेंटी मीटर से ज्यादा दूरी तक बढ़ने नहीं दिया जाए। पौध रोपण के करीब दो-तीन महीने बाद, यानि अक्टूबर-नवंबर में पेड़ों की उंचाई 30-40 सेंटी मीटर तक सीमित कर दी जाए। इस प्रक्रिया के 15 दिन बाद, नए कोपल फूट पड़ेंगे। इन नए कोपलों को करीब 3 से 4 महीने बाद, यानि फरवरी, मार्च में उनकी लंबाई का पचास फीसदी फिर काट दिया जाए। इससे काटे गए बिंदु से नई कोपल पैदा होंगीं, इन नई कोपलों को भी, कुछ समय बाद, यानि मई-जून में पचास फीसदी छांट दिया जाए। इस प्रक्रिया से डालों को

बेहतर विकास में मदद मिलेगी और पेड़ पर छतरी का आकार विकसित होगा और पहले साल से ही यहाँ फल आना शुरु हो जाएंगे।

- रोपण के एक साल बाद, खाद डालने की प्रक्रिया शुरु की जाना चाहिए। एक साल पुराने पेड़ों के लिए खाद की खुराक में 32 ग्राम यूरिया, 84 ग्राम एसएसपी और 32 ग्राम एमओपी जून के महीने में डाला जाना चाहिए। इसके तीन महीने बाद, यानि सितंबर में खाद की दूसरी खुराक दी जाना चाहिए। यदि पेड़ दो साल, या फिर इससे भी पुराने हो गए हों तो यह खुराक लगभग दुगनी हो जाएगी। यानि इन मामलों में 64 ग्राम यूरिया, 168 ग्राम एसएसपी और 64 ग्राम एमओपी का इस्तेमाल किया जाएगा। यह प्रक्रिया जून महीने में की जानी चाहिए और इसके तीन महीने के बाद, यानि सितंबर में दूसरी खुराक, जिसमें 64 ग्राम यूरिया होना चाहिए, डाली जाए।
- पेड़ों की कटाई छंटाई साल में तीन बार की जाना चाहिए। ये कटाई छंटाई फरवरी, मई और अक्टूबर में की जा सकती है। जिन पेड़ों पर अमरुद लगा हुआ है, उनकी छंटाई जोड़ने वाले स्थान (जंक्शन) पर किया जाना बेहतर होगा। टहनी के भूरे और हरे टिशू के बीच में यह कटाई होना चाहिए।
- हर 6 साल बाद, फल देने वाले पेड़ों की भी गहरी छंटाई की जाना चाहिए और उन्हें द्वितीयक शाखा तक छांट देना चाहिए, जिससे डालों की अधिक्यता से बचा जा सकता है। इस तरह के कटाई छंटाई किए गए पेड़ों में फल ज्यादा संख्या में उपजेंगे और इन्हें तीन गुना तक बढ़ाया जा सकता है यदि नई डालियों को लगातार काटा छांटा जाए, जैसा कि पहले भी बताया गया है।
- कटाई छंटाई की इस प्रक्रिया से फलों की पैदावार जुलाई–अगस्त, नवंबर–जनवरी और मार्च अप्रैल के महीने में हो सकती है। बागवानी की इस प्रक्रिया के अनुसार तीसरे साल में उपज 38 टन प्रति हेक्टेयर तक हो सकती है। इसी तरह पांच साल पुराने बगीचे से 20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से उपज ली जा सकती है।

प्रयोज्यता / स्थिति

अमरूद पैदावार की यह तकनीक भारत के पूरे पूर्वी हिस्से के लिए लाभदायक है।

आर्थिक आंकलन

- एक हेक्टेयर में अति उच्च घनत्व वाले अमरूद के बाग की स्थापना में ₹ 2.5 लाख की आवश्यकता होती है।
- एक हेक्टेयर वाले इस बाग की देख रेख के लिए चार साल के समय में ₹ 4.42 लाख की आवश्यकता होती है।
- लेकिन चार साल की स्थापना के बाद, प्रति वर्ष, प्रति हेक्टेयर ₹ 2.65 लाख का लाभ प्राप्त होगा।

3.21 अल्फीसोल भूमि में टमाटर की फसल में उकठा (बैक्टीरियल विल्ट) का एकीकृत प्रबंधन

संबद्ध वैज्ञानिक

जे. पी. शर्मा एवं एस. कुमार।

समस्या

टमाटर में मूल्य प्रभावी तकनीक की कमी, जो कि टमाटर के पौधे को उकठा (बैक्टीरियल विल्ट) से बचा सके, खासकर जीवाणुओं के हमले के बाद पौधों के मुरझाने को रोक सके।

विवरण

- बैक्टीरियल विल्ट *(राल्सटोनिया सोलनसीरम)* एक गंभीर समस्या है, खासतौर पर सोलेनेसियस प्रजाति की साग सब्जियों के लिए, जो कि अल्फीसोल भूमि में उपजाई जाती हैं। इस जीवाणु के कारण पैदावार को गंभीर खतरा उत्पन्न होता है, खासतौर पर बारिश के मौसम में। यह रोगजनक जीवाणु मिट्टी में लंबे समय तक जीवित रहता है और इससे खेतों में निबटना मुश्किल है। रासायनिक रूप से इस पर नियंत्रण पाने की विधि काफी महंगी है और आर्थिक रूप से व्यवहारिक भी नहीं है। लेकिन ऐसा नहीं है कि इसका विकल्प नहीं है। प्रतिरोधी किस्म की प्रजातियां और एकीकृत प्रबंधन के माध्यम से बेहतर रास्ता निकाला जा सकता है। लेकिन यह देखा गया है कि कुछ सालों बाद,कुछ प्रतिरोधी प्रजातियां रोगात्मत हो जाते हैं इसका मुख्य कारण है रोगजनक जीवाणुओं में भी लगातार आए बदलाव। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अल्फीसोल भूमि में जीवाणुओं की तकनीक के प्रबंधन को मानकीकृत कर दिया गया है।
- संयुक्त रूप से यदि गोबर की सड़ी खाद (फार्म यार्ड मेन्योर), 3 टन प्रति हेक्टेयर, हरी खाद 120 किलो प्रति हेक्टेयर, जो कि सेस्बानिया प्रजाति के बीज बोने से पैदा हुई हो, 5 किलो प्रति हेक्टेयर पीजीपीआर मिट्टी में डालें, 1 फीसदी पीजीपीआर से जड़ भीगायें, चूना 2.5 टन प्रति हेक्टेयर, करंज (पोनगामिया) की खल्ली 1.0 टन प्रति हेक्टेयर, इस्तेमाल किए गए मशरूम की खल्ली (प्लूरोटस) 1.0 टन प्रति हेक्टेयर, बैक्टीरियल विल्ट प्रतिरोधी टमाटर के पेड़ मुरझाने की समस्या में काफी प्रभावी है। ये बैक्टीरियाई प्रजनन और इसे पैदा होने के कारणों को कमजोर करते हैं। इस तकनीक के इस्तेमाल से टमाटर की पैदावार भी काफी बढ़ जाती है।

प्रयोज्यता / स्थिति

यह तकनीक पूर्वी भारत के सभी साग सब्जियों की पैदावार कर रहे क्षेत्रों के लिए लागू की जा सकती है।

आर्थिक आंकलन

यदि यह तकनीक अपनाई जाती है तो टमाटर की पैदावार में करीब 50 फीसदी की बढ़ोतरी दर्ज की जाती है।

3.22 टपक सिंचाई प्रणाली के तहत सब्जी की फसलों की उत्पादन प्रक्रिया

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. अब्दुल हारिस, अतुल कुमार सिंह, ए. उपाध्याय।

समस्या

भारत, खासकर बिहार में साग सब्जियों के उत्पादन में सिंचाई को श्रेणीबद्ध कार्यक्रम बनाने और उसका पालन करने, विशेष तौर पर ड्रिप सिंचाई, यानि टपक प्रणाली की परंपरा नहीं है। खरीफ के मौसम में सामान्तयः बिहार में बढ़िया वर्षा होती है, इसके बाद आने वाले रबी के मौसम में फसल के वढ़िया विकास और उत्पादन के लिए सिंचाई की जरुरत पड़ती है। इस मौसम में प्रदाय की अपेक्षा मांग काफी बढ़ जाती है और इसीलिए पानी के न्यायसंगत बंटवाले की जरुरत होती है। मध्यम स्तर पर और पहाड़ों पर बसी जमीन में जल बचाव तकनीकों की आवश्यकता है और टपक प्रणाली जल बचाने में महती भूमिका निभा सकती है।

विवरण

टमाटर (एस–41), बैंगन (स्वर्ण मानी और स्वर्ण श्री) और गोभी (सी–139), लंबी भिंडी (अरका अभय और अरका अनामिका) अनुक्रम सितंबर के पहले पखवाड़े से लेकर अगले साल जून के महीने तक ड्रिप सिंचाई के माध्यम से उपजाए जाते हैं। सिंचाई के विभिन्न स्तर, 100 प्रतिशत, 80 प्रतिशत या फिर 60 प्रतिशत वाष्पोत्सर्जन यानि इवेपो-ट्रांसपिरेशन (ईटी), जो दिन में एक बार या फिर तीन दिन में एक बार के अंतराल में दिए जाते है। बीच की दुरी टमाटर–बैंगन संयोजन में 60 X 60 सेंटीमीटर, गोभी–लंबी भिंडी संयोजन में 60 X 45 सेंटीमीटर रखी जाती है। पानी प्रवाह की दर 2 लीटर प्रति घंटा होती है। खाद की मूल खुराक के अलावा नाइट्रोजन की जब भी जरुरत महसूस होती है ड्रिप सिंचाई के माध्यम से प्रदान की जाती है। नतीजों के आंकलन से पता चलता है कि 80 फीसदी ड्रिप सिंचाई, इटी पर तीन दिन में एक बार करने से टमाटर और बैंगन (10 टन प्रति हेक्टेयर) में बेहतर परिणाम सामने आते हैं। और पैदावार 83–96 टन प्रति हेक्टेयर तक ली जा सकती है। जल इस्तेमाल दक्षता 60 फीसदी ईटी पर बेहतर थी। 80 प्रतिशत ईटी पर दो दिन में एक बार, सिंचाई ने बंद गोभी के मामले में बेहतर परिणाम दिए। इस प्रक्रिया में पैदावार 48–73 टन प्रति हेक्टेयर दर्ज की गई। इसी तरह लंबी भिंडी के मामले में रोजाना 80

फीसदी ईटी पर सिंचाई ने ठीक नतीजे दिए और उत्पादन 10-16 टन प्रति हेक्टेयर दर्ज किया गया। इस प्रणाली की जब सीधी सिंचाई प्रणाली से तुलना की गई, तो पाया गया कि टमाटर–बैंगन संयोजन में 25-40 पीसदी पानी की बचत हुई, जबकि बंद गोभी–लंबी भिंडी के संयोजन में पानी की यह बचत 32-40 फीसदी की रही।

प्रयोज्यता / स्थिति

बिहार के सिंचित मध्यम और ऊपरी भूमि पर बसी जमीन के लिए लाभदायक है।

लाभ–लागत अनुपात

ड्रिप सिंचाई प्रणाली की कीमत ₹ 70,000 से लेकर ₹ 1,00,000 तक प्रति हेक्टेयर आंकी गई। लेकिन लाभ–लागत अनुपात 2.5 : 1.0 रहा।

3.23 अधिक दूध उत्पादन के लिए खनिज मिश्रण प्रदाय के ठोस विकल्प

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. डे एवं उज्ज्वल कुमार।

समस्या

बढ़ती हुई गहन खेती और फसल की बदलती हुई प्रथाओं के कारण मृदा और इस कारण पौधों में भी कई महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों और सहयोगी अवययों की कमी होने लगी है। पूर्वी क्षेत्र में डेरी पशु अधिकांशतः फसलों के बचे अवशेषों पर ही निर्भर रहते हैं और उन्हें कोई अतिरिक्त भोजन नहीं दिया जाता। फसलों के अवशेषों में, ऊपर बताए गए कारणों की वजह से कई महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों की कमी होने लगी है और इसके फलस्वरूप इन पशुओं को भी खनिज पदार्थ पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलते, जिससे उनका वजन और दूध का उत्पादन, दोनों तेजी से कम हो रही हैं।

विवरण

पूर्वी क्षेत्र के जानवरों में जरूरी अवययों की कमी साफ झलकती है। बालों का गिरना, भूख पर असर, त्वचा पर घाव, हड्डियों में असामान्यता, ये सभी इसी के लक्षण हैं। इस क्षेत्र में करीब 80 फीसदी पशुओं को अतिरिक्त पौष्टिक मिश्रण नहीं दिया जाता, जिस वजह से यहाँ दूध के उत्पादन में भी कमी आ रही है। अतिरिक्त उपलब्धता के माध्यम से खनिज पदार्थों की पर्याप्तता, इस क्षेत्र में बढ़िया स्वास्थ्य और दूध के उत्पादन के लिए आवश्यक है। जानवरों की विभिन्न प्रजातियों के लिए भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा की गई सिफारिशों के अनुरूप निर्धारित खनिज मिश्रण क सूत्र तैयार करने की तकनीक उपलब्ध है। खनिज पदार्थों का मिश्रण, ठोस मिश्रण के साथ 2 किलो प्रति 100 किलो की दर से मिलाया जाना चाहिए। वैकल्पिक रूप से यह 50 ग्राम प्रति दिन के हिसाब से, भोजन या फिर पानी में मिलाकर, डेयरी के लिए उपयोग में लाई जा रही गायों को उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

प्रयोज्यता / स्थिति

भारत के सभी पूर्वी प्रदेशों में लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

खनिज मिश्रण दिए जाने से संकर नस्ल की गायों और भैसों द्वारा दूध का उत्पादन 20 फीसदी तक बढ़ जाता है।

3.24 अधिक दूध उत्पादन और उत्तम स्वास्थ्य के लिए पशुओं में कृमियों का नियमित उपचार

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. डे, उज्ज्वल कुमार और पी. के. रॉय।

समस्या

डेयरी पशुओं में दूध का घटा हुआ उत्पादन और बढ़ता हुआ परजीवी पराक्रमण।

विवरण

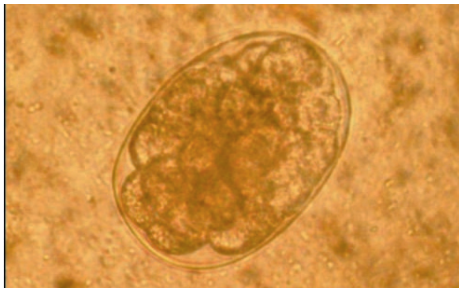

डेयरी की गाय और भैसों में आंतरिक परजीवियों के कारण, पशुओं की क्षमता धीरे–धीरे कम होती जाती है। उनका विकास थम जाता है और दूध का उत्पादन भी काफी कम होती जा रही है। आंतरिक परजीवी, भोजन ग्रहण करने की क्षमता और पाचन तंत्र पर भी विपरीत असर डालते हैं। वे पशु के अंदर का खून और टिशू द्रव भी चूसते हैं, जिससे जानवर लगातार कमजोर होता चला जाता है। बिहार और झारखंड में करीब करीब 90 फीसदी पशुओं को उनके शरीर में पल रहे परजीवियों से मुक्ति नहीं दिलाई जाती और नतीजे में दूध के उत्पादन में कमी दिखाई देती है। इन जानवरों के शरीर से परजीवियों को नष्ट करने की प्रक्रिया हर तीन महीने में एक बार की जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक एंटी-हेल्मेंटिक दवाएं, जो कि इन परजीवियों को मारने या फिर निकाल बाहर करने में मदद करती हैं, का उपयोग करना चाहिए। इससे पशुओं पर से इन परजीवियों का अतिरिक्त बोझ हटता है और वे स्वस्थ महसूस करते हैं। दवा का चयन पशु के शरीर में उपस्थित परजीवियों, उनकी सुरक्षा और उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति को देखते हुए करना चाहिए। इन परजीवियों को हटाने की दवाओं के अलावा कुछ और उपाय भी किए जा सकते हैं, जैसे कि जिस शेड में जानवर रहते हैं उसकी नियमित सफाई करना और उसे सूखा रखना, जानवरों को गोबर को खाद तैयार करने के लिए नियमित रूप से हटाना और साफ करना आदि।

प्रयोज्यता / स्थिति

पूरे पूर्वी प्रदेशों में इसे लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

नियमित रूप से परजीवियों को हटाने से संकर नस्ल के जानवरों और भैसों के दूध उत्पादन में 15 फीसदी की बढ़ोतरी हो सकती है।

3.25 भूमिहीन व्यक्तियों के जीवन स्तर में बेहतरी के लिए छोटे स्तर पर मुर्गी पालन

संबद्ध वैज्ञानिक

ए. डे, उज्ज्वल कुमार और एस. के. बरारी।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र में संसाधन विहीन गरीब परिवारों, खास तौर पर महिलाओं के लिए, आजीविका के साधन बढ़ाना बड़ी समस्या है। लेकिन इसका उपाय है घर के आंगन में ही पशुओं का पालन (बैकयार्ड लाइवस्टॉक फार्मिंग), जिससे परिवार की आर्थिक स्थिति बेहतर हो सकती है। स्थानीय प्रजाति की मुर्गियों से घर के आंगन में किए जाने वाले कुक्कुट पालन में कई समस्याएं आती हैं। इनमें पहला अंडा देते समय बढ़ी हुई उम्र, कम उत्पादन और कम विकास दर आदि शामिल हैं।

विवरण

आजीविका के विकास और पोषण आहार की घर में उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए आर्थिक रूप से कमजोर किसानों को दिव्यान रेड प्रजाति के कुक्कुट 6 पक्षी प्रति परिवार दिए जा सकते हैं। इन्हें कम खर्च पर घर में ही पाला जा सकता है। एक कम कीमत का शेड, इन पक्षियों की सुरक्षा के लिए, बांस और घासफूस से तैयार किया जा सकता है। दिन के समय पक्षियों को दाना चुगने के लिए छोड़ा जा सकता है और शाम के समय बचा हुआ भोजन और बिखरा अनाज इनके लिए पर्याप्त होगा। लेकिन इन पक्षियों को शिकारी पक्षी, पशुओं से बचाने की पूरी व्यवस्था करनी होगी। मुर्गियां 17.66 ±1.25 सप्ताह बाद अंडा देना शुरु करती हैं। इनके शरीर का वजन 1.54 ±0.05 किलो ग्राम होता है। एक पक्षी निम्न व्यवस्था वाले इस प्रणाली में साल भर में 157.77 ±4.31 अंडे दे सकता है।

खाकी केंपवेल प्रजाति की बतखें भी भूमि विहीन परिवारों को बांटी जा सकती हैं। एक परिवार को 4 बतखें दी जा सकती हैं, जो कि सामुदायिक तालाब में पाली जा सकती हैं। एक कम कीमत का मकान, इन पक्षियों की सुरक्षा के लिए, बांस और घासफूस से तैयार किया जा सकता है। दिन के समय पक्षियों को सामुदायिक तालाब या नहर पर दाना चुगने के लिए छोड़ा जा सकता है और शाम के समय बचा हुआ भोजन और बिखरा अनाज इनके लिए पर्याप्त होगा। लेकिन इन पक्षियों को शिकारी पक्षी, पशुओं से बचाने की पूरी व्यवस्था करनी होगी। बतख 26.0 ±0.72 सप्ताह बाद अंडा देना शुरु करती हैं। इनके शरीर का वजन 1.54 ±0.05 किलो ग्राम होता है। एक पक्षी निम्न

व्यवस्था वाले इस सिस्टम में साल भर में 160.00 ±5.3 अंडे दे सकता है।

प्रयोज्यता / स्थिति

देश के सभी पूर्वी प्रदेशों में यह व्यवस्था अमल में लाई जा सकती है।

आर्थिक आंकलन

औसतन, एक किसान एक मुर्गी के अंडे बेचकर ₹ 593 कमा सकता है। और यदि किसान अपने घरेलू फॉर्म हाऊस में अंडों से चिकन (मुर्गा) पैदा कर उन्हें बेचता है तो उसे साल भर में अतिरिक्त ₹ 600 प्रति परिवार की आमदनी होगी। इसी तरह एक किसान एक बतख के अंडे बेच कर ₹ 480 कमा सकता है। लेकिन यदि वह बतख के बच्चे भी बेचे, तो उसे ₹ 700 की अतिरिक्त आमदनी हो सकती है।

3.26 सिंचित क्षेत्रों में डेयरी पशुओं के लिए साल भर चारे का उत्पादन

संबद्ध वैज्ञानिक

एस. के. सिंह, बी. पी. एस. यादव, एस. के. दास और ए. डे।

समस्या

उन्नत श्रेणी के पशुओं और भैसों की उत्पादन क्षमता का पूरी तरह से दोहन तभी किया जा सकता है, जब उन्हें पर्याप्त मात्रा में हरा चारा उपलब्ध कराया जाए। लेकिन पूर्वी क्षेत्र में केवल 4 फीसदी हिस्से में ही चारा संबंधी फसलें उपलब्ध हैं। औसतन डेयरी के एक जानवर को साल में कुल 12 महीनो में से केवल 6 से 7 महीने ही हरा चारा नसीब हो पाता है। हरे चारे की कम उपलब्धता के कारण जानवरों के स्वास्थ्य एवं दूध उत्पादन क्षमता भी प्रभावित हो रहे है।

विवरण

हरे चारे उत्पादकता और पशुओं को साल भर हरा चारा उपलब्ध रहे, इसके लिए सघन चारा फसल चक्र का पालन करना होगा। सघन फसल चक्र में कम समय की उच्च पैदावार वाली प्रजातियां शामिल हैं। सिंचित चारा आधारित फसल चक्र में लोबिया–जई + सरसों–लोबिया–बरसीम + सरसों–लोबिया, मक्का + लोबिया–जई + सरसों–मक्का + लोबिया, मक्का + लोबिया–बरसीम + सरसों–मक्का + लोबिया, संकर नेपियर + लोबिया–संकर लोबिया + सरसों–संकर नेपियर + लोबिया और संकर नेपियर + लोबिया–संकर नेपिटर + बरसीम–ंकर नेपियर + लोबिया के संयोजन वाली फसलें, किसानों की सुविधा के अनुसार, बिहार के सिंचित क्षेत्रों में बोई जाना चाहिए। सालाना हरा चारे पैदावार 76.6 से 117.5 टन प्रति हेक्टेयर होती है।

प्रयोज्यता / स्थिति

बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के सिंचित क्षेत्र में इसे लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

बरसीम (10 किलो / संकर नस्ल की गाय और 15 किलो / भैंस को) दिए जाने से संकर नस्ल की गायों में दूध का उत्पादन 30 फीसदी तक बढ़ जाता है जबकि भैसों में यह 25 फीसदी तक ज्यादा होता है। इसी तरह सुडान चारा (15 किलो / संकर नस्ल की गाय और 20 किलो / संकर नस्ल की भैसों को) उपलब्ध कराने से दोनों, संकर नस्ल की गाय और भैसों में दूध का उत्पादन 15 फीसदी तक बढ जाता है।

3.27 सूअर उत्पादन के लिए शकरकंद आधारित आहार

संबद्ध वैज्ञानिक

जे. जे. गुप्ता और बी. पी. भट्ट।

समस्या

सुअरों के लिए सस्ता भोजन तंत्र, खासकर आदिवासी क्षेत्रों में।

विवरण

- भारत के पूर्वी हिस्से में शकरकंद पैदा करने की जबर्दस्त संभावना है, जिसे सुअरों के भोजन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। शकरकंद में ज्यादा उर्जा मूल्य उपलब्ध रहता है।
- शकरकंद की जिन प्रजातियों पर भरोसा किया जा सकता है उनमें एच–42, सोनीपत–2, पूसा सफेद आदि शामिल हैं, जिनकी उपरी सतह सफेद होती है और संकर नस्ल के शकरकंद, जिनकी उपरी सतह नारंगी रंग की होती है, में करीब 25–35 टन प्रति हेक्टेयर उत्पादन क्षमता है। इन्हें सुअर के लिए भोजन तंत्र के साथ जोड़ कर विकसित किया जा सकता है।
- शकरकंद को खाने के पहले इसे उबालना जरूरी होता है, जिससे कि इसका जहरीला पदार्थ क्लोम-रस नष्ट हो जाए।
- उबले हुए शकरकंद को सुअरों के भोजन में 60 फीसदी तक इस्तेमाल किया जा सकता है, साथ ही इसमें साग सब्जी वाले प्रोटीन और खनिज मिलाएं, जिससे कि यह किफायती मिश्रण बने। इस भोजन से ग्रोवर से फिनिशर अवस्था में जानवरों का 300–500 ग्राम प्रतिदिन तक वजन बढ़ सकता है।

प्रयोज्यता / स्थिति

पूरे पूर्वी और उत्तरी पूर्व प्रदेशों में लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

शकरकंद युक्त भोजन देने से ठोस आहार करीब 60 फीसदी कम हो जाता है। इससे संसाधन विहीन किसानों को आर्थिक रूप से काफी राहत मिलती है।

3.28 खरगोश के लिए फली चारा आधारित आहार

संबद्ध वैज्ञानिक

जे. जे. गुप्ता।

समस्या

खरगोश को देने वाले भोजन की खुराक की जानकारी का अभाव।

विवरण

- खरगोश भोजन के हिसाब से काफी पसंद किया जाने वाला जानवर है और इसका मुख्य कारण है इसका स्वाद, छोटा आकार और उच्चय प्रजननशीलता।
- खरगोश का करीब 30 से 50 फीसदी भोजन रेशेदार आहार होता है, जिसे हरे चारे के रूप में उपलब्ध कराया जा सकता है।
- फलीदार आहार, जैसे सोयाबीन, लोबिया, राइस बीन और बारसेम आदि शैशव काल से गुजर रहे और बड़े, दोनों तरह के खरगोशों को काफी पसंद आते हैं। इन फलीदार आहारों से खरगोशों की सूखे तत्व और पोषक तत्वों की जरुरतें 50 पीसदी तक पूरी हो जाएंगीं।
- यदि वयस्क खरगोशों को भोजन के रूप में यही खुराक दी जाती है, तो उनमें सूखे तत्वों, पोषक तत्वों की कोई कमी नहीं रहती और साथ ही रेशेदार भोजन और पोषण आहार को पचाने में भी उन्हें कोई समस्या नहीं होती।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

पूरे देश में इसे लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

खरगोशों को फलीदार भोजन की खुराक उपलब्ध कराने से परंपरागत ठोस भोजन की करीब 40 फीसदी तक बचत होती है।

3.29 आर्द्र भूमि क्षेत्रों में 'केज' प्रक्रिया से मछली पालन की खेती

संबद्ध वैज्ञानिक

डी. के. कौशल और ए. के. सिंह।

समस्या

पूर्वी क्षेत्र की मैदानी बाढ़ की आशंका से घिरी आर्द्रभूमि के लिए केज कल्चर यानि पिंजरे में मछली पालन, मछली उत्पादन बढ़ाने के लिए एक नायाब तरीका है। इस तकनीक को संस्थान के वैज्ञानिकों ने और भी सुधारने का प्रयास किया है, जिससे पूर्वी क्षेत्र में मछली उत्पादन बढ़ सके।

विवरण

- केज कल्चर, यानि पिंजरे की तकनीक ऐसी तकनीक है, जिसमें मछलियां एक बंद स्थान पर पाली जाती हैं। इस बंद स्थान में पानी की गुणवत्ता सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है और पास के जल स्त्रोत से इसके पानी को लगातार बदला जाता है।
- पिंजरा संस्कृति में लकड़ी, बांस या फिर स्टील की मदद ली जाती है। इस पिंजरे को जाली से ढ़क दिया जाता है। इसे पास के किसी बड़े जल स्त्रोत में डुबो कर रखा जाता है।
- पिंजरे में केवल एक स्थान पर, उपर के कोने को खोला जाता है, ताकि मछलियों को वहाँ से भोजन दिया जा सके। इस पंजरे का आकार 3 x 3 x 3 मीटर होना चाहिए और इसे मछलियों के बच्चों को पालने के लिए उपयोग में लाया जाता है। यदि हम बाजार में बेचने के लिए मछलियों का उत्पादन करना चाहते हैं तो हमें बड़े आकार का पिंजरा लगाना होगा।
- फ्राई पालने के लिए एकत्रित किए जाने वले फ्राई का घनत्व 47 फ्राई प्रति वर्ग मीटर (2.5–3.0 सेंमी) होना चाहिए और 105 दिनों बाद, 80 फीसदी जीवित दर पाया गया। एक साल में दो बार इस प्रक्रिया को दोहराया जा सकता है।

प्रयोज्यता / परिस्थिति

सभी पूर्वी प्रदेशों में इसे लागू किया जा सकता है।

आर्थिक आंकलन

दो पिंजरों के समूह से कुल आमदनी ₹ 8,000 आंकी गई है, खास तौर पर चौर क्षेत्र में एक हेक्टेयर में 10 ऐसे पिंजरों से करीब 6,000 मछलियों के अंगुलिका पैदा होंगे। इन्हें पिंजरे में रखें और दूसरे साल से सीधे बाजार में बेच कर लाभ उठाएं।

3.30 लघु कृषकों के जिवकोत्थान एवं मत्स्य उत्पादकता सुधार हेतु मत्स्य बीज उत्पादन

संबद्ध वैज्ञानिक

डी. के. कौशल एवं पी. एम. शेरी।

समस्या

बिहार एवं पूर्वी क्षेत्र में जलीय जीव विकास के विकास के लिए मछली के जीरे/अंगुलिकाओं की कमी एक मुख्य समस्या है। गुणवत्ता बीज एवं मत्स्य भोजन मछली के बढ़वार के लिए आवश्यक अवयव है। मछली के आपूर्ति को बढ़ावा देने हेतु स्थानीय हैचरी को इस तरह सुदृढ़ करना चाहिए कि वह बदलती हुई मॉग को पूरा कर सके और उसकी प्रारम्भिक लागत भी कम हो।

विवरण

गुणवत्ता बीज की उपलब्धता मत्स्य विकास के सफलता के लिए एक महत्वपूर्ण अवयव है। जून–सितंबर, वर्षा ऋतु कार्प मछली के प्रजनन हेतु उपयुक्त है। सार्वजनिक–निजी भागीदारी के माध्यम से आवश्यक मछली के ब्रूड स्टॉक का रख रखाव किया जाता है और प्रजनन से दो माह पहले लिंग के आधार पर मछली को अलग किया जाता है। हैचरी को एक प्रजनन टैंक और चार हैचिंग टैंक के स्थापना द्वारा निर्माण किया जाता है जिसकी क्षमता 50–60 लाख स्पॉन/दिन एवं 45 अरब स्पॉन प्रति चक्र होती है। नर एवं मादा मछली में ओभाप्रीका, ओभारिड या ओभाफिरा कि उचित मात्रा सूई के मदद से दी जाती है। सूई देने के 6–8 घंटे अंदर मादा मछली अंडा और नर स्पर्म पानी में छोड़ते है और निशेचित होते हैं। एक किलोग्राम की मछली औसतन 2 लाख अंडे देती है। हैचलिंग जिसे स्पॉन कहते हैं को नर्सरी तालाब में पाला जाता है। 15 दिन में स्पॉन 25 एम एम का आकार ग्रहण कर लेता हैं और भंडारण के लिए तैयार होता है।

क्षेत्र

सभी पूर्वी क्षेत्र

आर्थिक आंकलन

लगभग 45 अरब से अधिक जीरा एक प्रजनन ऋतु में एवं साल में उत्पादन होता है। मत्स्य के बीज के बिक्री से ₹ 3–25 लाख प्रति वर्ष आमदनी होती है।